धरा पर जीवन

धरा पर जीवन

सुकन्या दत्ता

विज्ञान प्रसार

प्रकाशक :
विज्ञान प्रसार
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग
ए-50, इंस्टीट्यूशनल एरिया, सेक्टर-62
नोएडा 201 307 (उत्तर प्रदेश), भारत
(पंजीकृत कार्यालय : टेक्नोलॉजी भवन, नई दिल्ली 110 016)
दूरभाष : 0120-2404430,35
फैक्स : 91-120-2404437
ई-मेल : info@vigyanprasar.gov.in
वेबसाइट : http://www.vigyanprasar.gov.in

कॉपीराइट © : विज्ञान प्रसार द्वारा 2009
अंतर्राष्ट्रीय पृथ्वी वर्ष-2008 के संदेश को जन-जन तक पहुंचाने के लिए विद्यार्थी, विज्ञान संचारक और विभिन्न संस्थाएं (सरकारी और गैर-सरकारी) इस प्रकाशन की विषय-वस्तु को संदर्भ के साथ उपयोग कर सकते हैं।

(इस पुस्तक के चित्र विभिन्न स्रोतों और वेबसाइटों से लिए गए है। उन सभी का संदर्भ देना संभव नहीं हैं। हम सभी वेबसाइटों और छायाकारों, जिनके चित्र यहां उपयोग किए गए है, के प्रति आभार व्यक्त करते है।)

धरा पर जीवन

लेखक : सुकन्या दत्ता
हिन्दी अनुवाद : हेमंत पंत
हिन्दी संपादन : बी. के. त्यागी एवं नवनीत कुमार गुप्ता
परियोजना संकल्पना एवं संयोजकः बी. के. त्यागी
मुख पृष्ठ एवं पृष्ठ संयोजन : प्रदीप कुमार
प्रकाशक प्रयवेक्षक : सुबोध महंती एवं मनीष मोहन गोरे

ISBN : 81-7480-183-8

मूल्य : 85 रुपए

मुद्रक : बंगाल ऑफसेट वर्कस्, करोल बाग, नई दिल्ली

विषय सूची

भूमिका ..... *vii*

प्राक्कथन ..... *ix*

1. धरा पर जीवन 1
2. धरती पर जीवन का आरम्भ 9
3. धरती पर जीवन का वर्गीकृरण 35
4. जीवन शृंखलाएं और जीवन जाल 39
5. जैव विविधता 47
6. जैव विविधता का विस्तार 53
7. अत्यधिक जैव विविधता क्षेत्र 59
8. जैव विविधता के लाभ 63
9. जैव विविधता के जोखिम 69
10. जैव विविधता प्रबंधन 75

पारिभाषिक शब्दावली 87

अनुक्रमणिका 89

भूमिका

जहां तक हम जानते हैं पृथ्वी ही एकमात्र ऐसा ग्रह है जिस पर जीवन है। इस ग्रह पर जानवर, पौधे तथा सूक्ष्म जीव जीवन के अनेक रूपों के साथ नाजुक संतुलन बनाते हैं, जिन्हें हम जैवविविधता कहते हैं। हर प्रजाति अपने अस्तित्व के लिए अन्य प्रजाति पर निर्भर रहती है। निश्चित तौर पर, जब हम पृथ्वी पर जीवन की बात करते हैं तो हम मानव प्रजाति की बात भी करते हैं। यदि हम अपने पर्यावरण को समझना और उसे संरक्षित रखना चाहते हैं तो हमें प्रजातियों की एक-दूसरे पर निर्भरता तथा जीवित प्राणियों के लिए हवा, जल और मृदा जैसे प्राकृतिक संसाधनों के महत्व को समझना होगा।

इस धरती पर जीवन को विकसित होने तथा बदलते परिवेश के साथ अनुकूलित होने में लाखों-करोड़ों वर्ष लग गए। केवल वे प्रजातियां ही बच पाईं जो बदलते परिवेश के साथ अनुकूलित हो पाईं। हो सकता है कि यह परिवर्तन भूकंप, ज्वालामुखियों के फटने, चक्वात इत्यादि प्राकृतिक कारणों के चलते पैदा हुआ हो। लेकिन, पर्यावरण में यह परिवर्तन उन प्रजातियों द्वारा भी लाया जाता है जो विकास की सीढ़ी में काफी ऊपर हैं। वे पर्यावरण को अपनी जरूरतों और विकास के लिए नियंत्रित करने की कोशिश करती हैं। यही काम मानव प्रजाति ने हमारे इस नाजुक ग्रह के साथ किया है; और यह प्रक्रिया अब भी जारी है।

हमें विकास के लिए ऊर्जा चाहिए, जिसे परंपरागत रूप से हम लकड़ी, कोयला तथा पेट्रोलियम जैसे प्राकृतिक संसाधनों के दहन द्वारा प्राप्त करते हैं। सदियों से हम

इन संसाधनों का दहन ऊर्जा संबंधी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कर रहे हैं। आज इस बारे में तो एक राय है कि जीवाश्म ईंधनों को जलाने की प्रवृत्ति तथा उसके फलस्वरूप कार्बन डाइऑक्साइड जैसी अन्य ग्रीनहाउस गैसों को वायुमंडल में छोड़ने जैसी मानव गतिविधियां ही पृथ्वी को गर्म, और अधिक गर्म बना देने के लिए काफी हद तक जिम्मेदार रही हैं। जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण का ह्रास, प्रजातियों के विलोपन की बढ़ती दर, पेय जल की घटती उपलब्धता, सागर तक पहुंचने से पहले ही नदियों के सूखने, मृदा की गुणवत्ता का ह्रास तथा उसके चलते घटती उपजाऊ जमीन, ऊर्जा के घटते स्रोत, सिर उठाते रोगों तथा तेजी से बढ़ती जनसंख्या के भरण-पोषण की चुनौती से उत्पन्न खतरे आज हमारे ग्रह पर मंडरा रहे हैं। मानव जनसंख्या अब इतनी अधिक हो गई है कि उसके जीवन यापन के लिए आवश्यक संसाधनों की मांग उपलब्ध संसाधनों से कहीं अधिक हो रही हैं। इसका अर्थ यह है कि आज हम चादर से अधिक पैर पसार रहे हैं। हम पृथ्वी के संतुलन को बनाए रखने के लिए आवश्यक मात्रा से अधिक प्राक्तिक संसाधनों का दोहन कर रहे हैं।

इस दिशा में विश्व का ध्यान आकर्षित करने और यह बताने के लिए कि पर्यावरण वह है जहां हम रहते हैं और विकास को एक नए परिप्रेक्ष्य में देखने व समझने की कोशिश करने के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ ने वर्ष 2008 को 'पृथ्वी ग्रह वर्ष' के रूप में मनाने की घोषणा की है। यह आशा की जाती है कि हम सभी के सहयोग से इस ग्रह पर जीवन और जैव विविधता बनी रहेगी। इसी उद्देश्य को लेकर अतर्राष्ट्रीय स्तर पर अनेक कार्यक्म व गतिविधियों का आयोजन किया जा रहा है। इसका एक महत्वपूर्ण उद्देश्य उपस्थित चुनौतियों के बारे में जनमानस में जागरूकता लाने तथा इस ग्रह को भावी खतरों से बचाने के लिए संभावित उपायों को ढूढ़ने में मदद करना है। इसी उद्देश्य को लेकर विज्ञान प्रसार ने गतिविधियों पर आधारित कार्यक्म 'पृथ्वी ग्रह' आरंभ किया है। इस कार्यक्म के अंतर्गत 'पृथ्वी ग्रह' विषय से संबंधित विविध सॉफ्टवेयरों का विकास, स्कूलों/कॉलेजों के विद्यार्थियों तथा आम जनता में जागरूकता के लिए अकाशवाणी एवं टेलीविजन कार्यक्म तथा सरकारी एवं गैर-सरकारी एजेंसियों/संस्थाओं के सहयोग से संसाधन व्यक्तियों का प्रशिक्षण आदि शामिल हैं।

हम यह आशा करते हैं कि 'पृथ्वी ग्रह' से संबंधित प्रकाशनों की शृंखला का विज्ञान संचारकों, विज्ञान क्लबों, संसाधन व्यक्तियों और व्यक्तिगत स्तर पर स्वागत किया जाएगा एवं उनसे प्रेरित होकर इस नाजुक निवास स्थल यानी पृथ्वी ग्रह को बचाने के लिए कार्य आरम्भ किए जाएंगे।

विनय बी. काम्बले
निदेशक, विज्ञान प्रसार
नई दिल्ली

प्राक्कथन

संयुक्त राष्ट्र की सामान्य सभा ने 82 देशों द्वारा अनुमोदित प्रस्ताव को स्वीकृति प्रदान करते हुए वर्ष 2008 को अंतर्राष्ट्रीय पृथ्वी वर्ष के रूप में मनाने की घोषणा की है। संयुक्त राष्ट्र द्वारा अंतर्राष्ट्रीय पृथ्वी वर्ष को तीन वर्षों सन् 2007 के आरंभ से सन् 2009 के अंत तक मनाया जाएगा। यह कार्यक्रम भूवैज्ञानिक विज्ञान और यूनेस्को के पृथ्वी विज्ञान विभाग का संयुक्त उद्यम है। अंतर्राष्ट्रीय पृथ्वी वर्ष की विषयवस्तु 'पृथ्वी विज्ञान के लिए समाज' विषय पर केंद्रित है। अंतर्राष्ट्रीय पृथ्वी वर्ष का उद्देशय पृथ्वी विज्ञान के नए रास्तों को खोजना और उन्हें दर्शाना है ताकि भावी पीढ़िया संभावित चुनौतियों का सामना कर सकने के साथ अधिक सुरक्षित और खुशहाल विश्व का सपना साकार कर सकें।

हम जानते हैं कि पृथ्वी ही ऐसा ज्ञात ग्रह है जो जीवन को कायम रखने में समर्थ है। पृथ्वी एक जटिल और गतिमान तंत्र है। इस बात से कोई इंकार नहीं करता कि हवा, पानी, मिट्टी, पृथ्वी का वायुमंडल, भूमि, महासागरों, बर्फ और जीवन को उनकी पारस्परिक क्रिया के साथ एकल सम्बद्ध तंत्र के रूप में समझने की आवश्यकता है। वास्तव में हमें पृथ्वी को एकल सम्बद्ध तंत्र के रूप में अध्ययन करने की आवश्यकता है और ऐसा करने में समर्थ होने के लिए हमें पृथ्वी के प्रत्येक कण की सुंदरता और उसकी महत्ता को समझना होगा। हालांकि विज्ञान और दर्शनशास्त्र दोनों में अतुल्य विकास के साथ हम इन सहसंबंधों की जटिलता को समझ पाए हैं। शायद इसीलिए स्क्यूमिश एवं डुवेमिश अमेरिकी जनजातियों के नेता चीफ सीटल ने इसका सर्वोत्तम सारांश इस प्रकार प्रस्तुत किया है कि "मानवजाति जीवन के जाल से ही नहीं बुनी है

बल्कि हम सब इसके एक धागे में शामिल हैं। इसीलिए जब हम इस जाल को छेड़ते हैं तो हमभी इससे प्रभावित होते हैं।" इस पुस्तक के द्वारा जीवन के आधार को बहुत सरल भाषा में समझाने का प्रयास किया जा रहा है। इस पुस्तक में पृथ्वी के आग के एक गोले से लेकर वर्तमान स्थिति तक पहुंचने के दौरान जीवन की विकास यात्रा को समझाने का प्रयत्न किया गया है। लेखक को उम्मीद है कि पाठक पुस्तक के द्वारा पृथ्वी पर जीवन से संबंधित विभिन्न आश्चर्यों को समझेंगे जिससे उन्हें यह आभास होगा कि वे भी इसी अद्‌भुत ग्रह का एक हिस्सा हैं। इस प्रकार हम पृथ्वी पर उपस्थित अतुल्य जैव विविधता को समझने के साथ ही उसका सम्मान भी करेंगे। यह उम्मीद की जा सकती है कि एक समय हम प्रतिदिन पृथ्वी दिवस मनाएंगे।

सुकन्या दत्ता

1

धरा पर जीवन

जीवन के आधार

'जीवन' और 'सजीव' शब्द आज बहुत सामान्य है। हम इन्हें सहज रूप से ही समझते हैं, और हम, सामान्यता बगैर किसी त्रुटि के, 'सजीव' और 'निर्जीव' के बीच में भेद कर सकते हैं। इन सबके बावजूद भी उन लक्षणों को पहचान पाना बहुत आसान नहीं है जो 'सजीव' को 'निर्जीव' से अलग करते हैं।

जब बच्चों से ऐसे गुणों को बताने के लिए कहा जाता है जो सजीव को निर्जीव से भिन्नता प्रदान करते है, बहुधा उनका जबाव होता है कि सजीवों में वृद्धि होती है। वे कह सकते हैं कि एक कुत्ता जीवित है क्योंकि वह चलता है परन्तु गति तो एक बैटरीचालित खिलौने में भी होती है। इसी तरह आरोही निक्षेप, किसी गुफा की छत से रिसने वाले पानी से निर्मित खनिज तत्त्वों की संरचना और निलम्बी निक्षेप, आरोही निक्षेप के विपरीत गुफा के फर्श से उठने वाली खनिजीय संरचना, में भी वृद्धि होती है और इन्हें शक्ति प्राप्त करने के लिए बैटरी की आवश्यकता भी नहीं होती है। बादलों मे भी गति होती है और उनका आकार भी बदलता रहता है। बच्चे कह सकते हैं कि एक बिल्ली का बच्चा जीवित है क्योंकि यह छूने पर गर्म महसूस होता है। पर इस आधार से, एक मेंढ़क, जो छूने पर ठंडा महसूस होता है, क्या जीवित नहीं है? थोड़े अधिक बड़े बच्चे यह तर्क दे सकते हैं कि एक सजीव किसी बाहरी उद्दीपन पर प्रतिक्रिया देता है तो क्या एक बर्फ का खण्ड, जो ऊष्मा उद्दीपक या गर्मी के सम्पर्क में आने पर पिघल जाता है, जीवित है?

सजीव और निर्जीव में अन्तर व्यक्त करते हुए चित्र

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि सहज ज्ञान को विस्तार से परिभाषित करने को कहा जाए तो यह एक मुश्किल काम होता है।

सजीव को परिभाषित करना

जीवन से संबंधित विषय के अध्ययन से जुड़े विज्ञानियों ने ऐसे विशिष्ट गुणों की पहचान की है जो सजीवों में समान रूप से पाए जाते हैं और उन्हें निर्जीवों से अलग बनाते हैं।

सजीवों में निम्नलिखित गुण समान रूप से पाए जाते है :

- इनकी संरचना अत्यन्त सुसंगठित एवं जटिल होती है।
- ये उद्दीपनों पर प्रतिक्रिया देते हैं।
- ये अपनी प्रतियां तैयार करने में सक्षम हैं।
- इनमें वृद्धि एवं विकास होता है।
- इनमें अपने पर्यावरण के अनुकूल रहने अथवा ढल जाने की क्षमता होती है।

- ये एक विशिष्ट रासायनिक संघटन को बनाए रखते हैं जो इनके वातावरण से भिन्न होता हैं।
- ये ऊर्जा का इस्तेमाल करते हैं।

कभी-कभार एक निर्जीव रचना भी उक्त गुणों में से कुछ को प्रदर्शित कर सकती है परन्तु निर्जीवों में कभी भी उपर्युक्त सभी गुण नहीं पाए जा सकते हैं। उदाहरण के लिए, यद्यपि एक रोबोट की संरचना अत्यन्त जटिल होती है, ये उद्दीपनों पर प्रतिक्रिया देता है और ऊर्जा का प्रयोग करता है, परन्तु ये प्रजनन, वृद्धि अथवा विकास नहीं कर सकता है।

फिर भी, विषाणुओं को परिभाषित करते समय हमें एक बार ठिठकना पड़ेगा। विषाणु ऐसी संरचनाएं हैं जो सजीवों और निर्जीवों को विभेदित करने वाली सीमा रेखा पर पाई जाती है। विषाणुओं में सजीवों और निर्जीवों दोनों के ही कुछ गुण पाए जाते हैं। इसी कारण विषाणुओं को इस पुस्तक के दायरे से बाहर रखा गया है।

बायोस्फीयर या जीवमण्डल

जीवित संरचनाओं के अध्ययन के दौरान यह तथ्य दृष्टिगत रखना अत्यन्त आवश्यक है कि जीवित संरचनाएं और उनका निर्जीव पर्यावरण अटूट बन्धन के साथ एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। प्रत्येक का प्रभाव दूसरे पर पड़ता है और कोई भी जीव अपने पर्यावरण के बिना नहीं रह सकता। जैव मण्डल की संकल्पना इसी तथ्य पर आधारित है। 'बायोस्फीयर' शब्द रूसी वैज्ञानिक व्लादिमिर वनरनाद्स्की द्वारा दिया गया था। यह 'धरा का जीवन क्षेत्र' है और इसमें सभी जीव रचनाएं एवं समस्त कार्बनिक तत्व सम्मिलित हैं। इस प्रकार से जीव मण्डल के अन्तर्गत भूमि, वायु एवं जल समाविष्ट हैं। जहां भी जीवन मौजूद हो सकता है, जीव मण्डल का क्षेत्र वहां तक फैल जाता है।

रॉबर्ट हुक

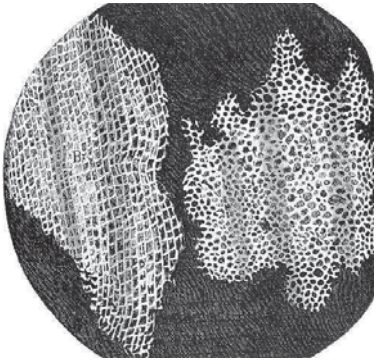

रॉबर्ट हुक द्वारा चित्रित कॉर्क का आरेख

कोशिकाएं - जीवन की महत्वपूर्ण इकाई

एक बार सजीव और निर्जीव के गुणों को जानने और उनके बीच अन्तर को समझ लेने के बाद यह जानना आवश्यक है कि जीवित शरीर की संरचना क्या होती है। वैज्ञानिक इस बात पर एकमत हैं कि जीव एक या एकाधिक रचनात्मक इकाई से मिलकर बनते हैं जिसे कोशिका कहा जाता है। दरअसल सन् 1665 में प्रकृति में रुचि रखने वाले अंग्रेज दार्शनिक रॉबर्ट हुक ने कॉर्क की परतों को अपनी सूक्ष्मदर्शी से देखा तो पाया कि कॉर्क छोटे -छोटे बारिक बॉक्स जैसे खण्डों से मिलकर बना है उन्होंने इन खण्डों को कोशिका नाम दिया। इसके बाद अन्य वैज्ञानिकों द्वारा इस दिशा में कोशिका सिद्धांत प्रस्तुत किए गए।

कोशिका सिद्धांत के अनुसार सभी जीव संगठन की एक समान इकाई 'कोशिका' से मिलकर बने हैं। इस विचार को औपचारिक रूप से 1839 में जर्मन वनस्पति विज्ञानी थियोडोर श्लाइडेन और जर्मन शरीरक्रिया विज्ञानी मैथियास श्वान ने प्रस्तुत किया था। यह सिद्धांत ही आधुनिक जीव विज्ञान का आधार बना।

आरम्भिक कोशिकाएं

यह बात आसानी से समझी जा सकती है कि शरीर रचना की मूल इकाई रातोंरात पृथ्वी पर नहीं आ गई होगी। कोशिका जैसी रचनाओं का विकास धरती पर जीवन के आरंभिक काल से ही शुरू हो गया था। इन्हें 'प्री-साइट्स' या कोशिका पूर्ववर्त्ती कहा गया। एक प्री-साइट को एक कोशिका जैसी संरचना, जिसका निर्माण पूर्ण या आंशिक अजैविक रूप से निर्मित तत्त्वों के अपने आप संगठित होने से हुआ हो, के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। इन प्री-साइट्स के प्रो-साइट्स या प्रोकैरयोट्स में विकसित होने के बाद ही धरती पर वास्तविक 'जीवन' का आरम्भ हुआ।

कोशिका की भीतरी संरचना

कोशिका सभी जीवों की प्राथमिक रचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई होती है। यह जीवद्रव्य (प्रोटोप्लाज्म) से भरी होती है। जीवद्रव्य एक संश्लिष्ट या मिश्रित, अर्द्ध-तरल, पारभासी पदार्थ है जो प्राणी एवं वनस्पति कोशिकाओं का जीवित तत्त्व है और किसी कोशिका के

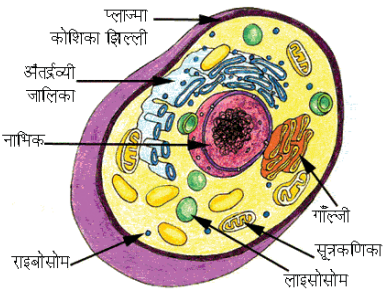

जीव कोशिका

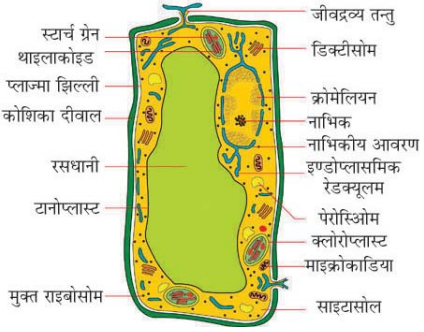

वनस्पति कोशिका

जीने से संबंधित आवश्यक कार्यों को प्रदर्शित करता है। कोशिका की संरचना एवं क्रियाविधि को तय करने के लिए आवश्यक सूचनाएं गुणसूत्रों में कैद कुछ अपवादों के साथ डी.एन.ए. या डीऑक्सीराइबोन्यूक्लिक एसिड में संचित रहती हैं जहां ये विशिष्ट प्रोटीनों से संबंधित रहती हैं। कोशिकांग किसी कोशिका के अन्दर मौजूद अलग-अलग संरचनाएं होती हैं जो विशिष्ट कार्यों को अंजाम देती हैं। ये कोशिकांग कई प्रकार के होते है। एक कोशिका के लिए कोशिकांग का वही महत्व है जो एक शरीर के लिए अंग का होता है।

पूर्ववर्ती कोशिका से कोशिका की उत्पत्ति

कोशिका रोग विज्ञान के जनक और अपने काल के अग्रणी मानव-विज्ञानी जर्मनी के डा॰ रूडोल्फ विरकोव ने यह विचार प्रस्तुत किया, "Omnis cellula e cellula", जिसका अर्थ है कि सभी कोशिकाओं की उत्पत्ति पहले से मौजूद कोशिकाओ से ही होती है। आज इस सिद्धांत पर सभी एकमत हैं कि कोशिका का निर्माण किसी अन्य कोशिका से विभाजन की क्रिया द्वारा होता है और कोशिकीय गतिविधियों के चलते कोशिका के अंदर ऊर्जा का प्रवाह होता है।

कोशिकाओं के अंदर मौजूद आनुवंशिक सामग्री कोशिका विभाजन के समय पुत्री कोशिकाओं में पहुंच जाती हैं।

कोशिका सिद्धांत के अनुसार

1. सभी ज्ञात जीवित पदार्थ कोशिकाओं से बने हैं।
2. कोशिका सभी जीवित पदार्थों की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई है।
3. सभी कोशिकाएं अपनी पूर्ववर्ती कोशिकाओं से कोशिका विभाजन द्वारा उत्पन्न होती हैं।
4. कोशिकाओं में आनुवंशिक सूचनाएं मौजूद होती हैं जो कोशिका विभाजन के समय आगे प्रसारित कर दी जाती हैं।
5. मूल रूप से रासायनिक संघटन के अनुसार सभी कोशिकाएं एक समान होती हैं।
6. जीवन के लिए समस्त ऊर्जा प्रवाह कोशिकाओं के भीतर ही होता है।

एककोशिकीय एवं बहुकोशिकीय जीव

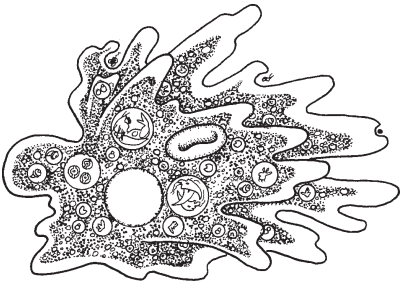

अमीबा-एककोशिकीय जीव

एक ही कोशिका से बने हुए जीव एककोशिकीय कहलाते हैं। जिन जीवों की रचना एक से अधिक कोशिकाओं से मिलकर होती है, उन्हें बहुकोशिकीय कहा जाता है। अमीबा एककोशिकीय जीव है तो मानव बहुकोशिकीय। एककोशिकीय जीवों के भी दो प्रकार हो सकते हैं; प्रोकैरयोट्स जैसे जीवाणु, जिनमें गुणसूत्र एक पृथक केन्द्रक के भीतर फंसे नहीं होते, और यूकैरयोट्स जैसे यीस्ट, जहां गुणसूत्र केन्द्रक के अन्दर अव्यवस्थित होते हैं। कोशिका के केन्द्रक के बाहर मौजूद जीवद्रव्य को सायटोप्लाज्म या कोशिकाद्रव्य कहा जाता है।

बारीकी से देखने पर एक एककोशिकीय जीव भी आश्चर्यजनक रूप से रचनात्मक एवं क्रियात्मक भिन्नताएं प्रकट करता नजर आता है। फिर भी, एक ही कोशिका होने के कारण यहां इसकी अपनी सीमाएं हैं।

सभी उच्च जीव बहुकोशिकीय हैं। इस हिसाब से ये कोशिका के आकार और प्रकार के कारण होने वाले बंधनों से उबर जाते हैं। बहुकोशिकीय जीवों में कुछ कोशिकाएं किसी कार्यविशेष को करने के लिए एक साथ मिलकर कार्य करती हैं। अपने कार्य को बेहतर ढंग से सम्पादित करने के लिए उनकी संरचना में भी बदलाव हो सकता है। उदाहरण के लिए तंत्रिका कोशिकाओं में लम्बे और शाखीय प्रवर्ध या कण्टक जो जड़ों की तरह दिखाई देते हैं, जबकि त्वचा की सतह पर पाई जाने वाली कोशिकाएं चपटी होती हैं और इनमें प्रवर्ध नहीं पाए जाते। इससे साबित होता है कि कोशिकाएं उनके द्वारा किए जाने वाले कार्य के अनुसार खुद को ढाल लेती हैं। इससे उन्हें अपने कार्य को बेहतर ढंग से अंजाम देने में आसानी रहती है।

बहुकोशिकीय जीव के अंदर विशिष्ट कोशिकाएं

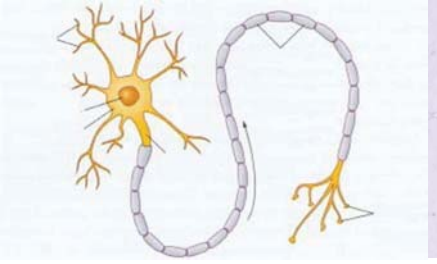

तंत्रिका कोशिकाएं

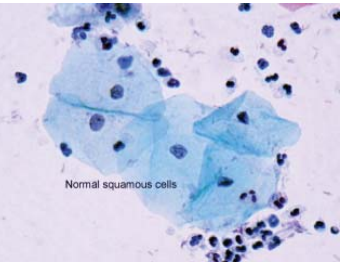

गाल में अंदर की कोशिका

कोशिका मण्डल या कोशिकाओं की कॉलोनी

कभी-कभी एककोशिकीय संरचनाएं आपस में जुड़कर एक कॉलोनी या मण्डल बना लेती है जो बहुकोशिकीय जीवों की तरह कार्य करती है। इसका एक बेहतरीन उदाहरण है, वॉलवॉक्स। यह हरा पौधा आमतौर पर झीलों और तालाबों में पाया जाता है। हर गुच्छा एक पिन के सिरे के बराबर होता है जो खोखले गोले के आकार में होता है। हर गुच्छे में 500 से 50,000

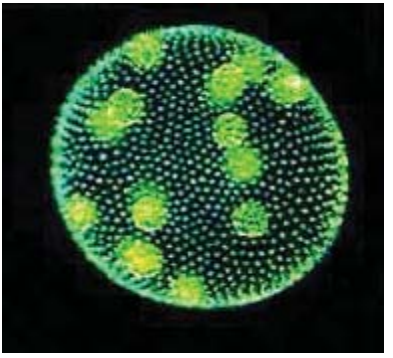

वॉलवॉक्स की कॉलोनी

कोशिकाएं होती हैं। हर कोशिका अपनी सबसे करीबी कोशिका से कोशिकाद्रव्य की एक लड़ी की सहायता से जुडी होती है। हर कोशिका में दो बाल की तरह के कशाभ होते हैं जो गोले को ढंकने वाली बाहरी श्लेष्मक दीवार से बाहर निकले रहते हैं। एक साथ मिलकर ये कोशिकाएं अपने कशाभों को पतवार की तरह इस्तेमाल करती हैं जिससे कॉलोनी को अधिकतम सूर्य के प्रकाश वाले क्षेत्र में ले जाया जा सके।

कोशिका का जीवन काल

एक तरह से देखा जाए तो एककोशिकीय जीव अमर होते हैं। यदि अपने पर्यावरण से तालमेल नहीं बैठा पाने के कारण नष्ट न हो जाए या किसी शिकारी द्वारा हड़प न कर लिया जाए तो अधिकतर एककोशिकीय जीव दो पुत्री कोशिकाओं में विभक्त हो जाते हैं और यह प्रक्रिया चलती रहती है। परन्तु, वास्तव में प्रकाश, तापमान और भोजन की उपलब्धता जैसे कारक इस असीमित वृद्धि पर नियंत्रण रखते हैं।

बहुकोशिकीय जीव आमतौर से उम्र के चढ़ाव के साथ ही रोग एवं चोट से मृत हो जाते हैं, फिर भी अपने जीवनकाल में इनमें भी कोशिकाओं के कई जन्म हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, त्वचा की कोशिकाएं व्यक्ति के संपूर्ण जीवनकाल में लगातार बदलती रहती हैं।

प्रजातियों की जीवन अवधि

विभिन्न बहुकोशिकीय जीवों द्वारा जीवन अवधि में अनगिनत भिन्नताएं प्रदर्शित की गई हैं। भीमकाय वृक्ष प्रजाति (स्कोविया) और रक्तदारू (रेडवुड) वृक्ष हजारों वर्षों तक जीवित रह सकते हैं। मौसमी पौधे, जैसे सूरजमुखी की आयु एक वर्ष ही होती है। इसी प्रकार कछुआ जहां 150 वर्षों तक जीवित रह सकता है वहीं कुत्ता 10 वर्ष की उम्र में ही वृद्धावस्था को पहुंच जाता है। पिगमी गोबी नामक एक मछली तो औसतन 59 दिनों की ही जिदंगी जीती है परन्तु चाहे जीवन की अवधि लम्बी हो या छोटी, जीवन के सभी प्रकार एक विशालकाय कैनवास के हिस्से हैं जो इस धरा में सुन्दरता, स्फूर्ति, गतिशीलता और रंग भरते हैं।

2

धरा पर जीवन का आरम्भ

हमारी धरती बहुत पुरानी है। यदि इसका इतिहास देखा जाए तो हमारे पास उपलब्ध प्राणियों और वनस्पतियों के ऐतिहासिक या जीवाश्म रिकार्ड के अनुसार धरती का अस्तित्व बहुत पुराना है। वैज्ञानिकों के अनुसार पृथ्वी की उम्र लगभग 4.55 अरब वर्ष है। इस महाविशाल समय के पैमाने को समझना बहुत मुश्किल है। इसलिये वैज्ञानिकों ने धरती की उम्र को कई कालों में विभक्त किया है।

जीवन का कलैण्डर

उपरोक्त सारणी के अनुसार कालावधि वास्तव में बहुत विशाल है। लेकिन यदि प्रकृतिविद् डेविड एटनबरो द्वारा उनकी पुस्तक 'लाईफ ऑन अर्थ' में प्रस्तुत किए गए समय के पैमाने को अपनाया जाए तो गुजरे वक्त के विस्तार को सरलता से समझा जा सकता है। उनके अनुसार यदि हम एक ऐसे कलैण्डर को अपनाएं जिसमें साल का हर दिन 10 करोड़ वर्ष के बराबर हो तो इस हिसाब से हम यह याद रख सकते हैं कि धरती पर मानव की उत्पत्ति 31 दिसम्बर की शाम को हुई थी। इस प्रकार से विभेद करने पर आसानी से घटनाओं को याद रखा जा सकता है।

जीवन पथ

अब सवाल यह उठता है कि आखिर पृथ्वी का आग के गोले के रूप में टूटकर अलग होने के बाद से 31 दिसम्बर तक, जब हम एक प्रजाति के रूप में अस्तित्व में आए,

भूवैज्ञानिक समय मापक्रम

महाकल्प	युग	काल	प्रारम्भ (लाख वर्ष पूर्व)
फैनिरोज़ॉइक	सीनोज़ॉइक	नियोजीन (मायोसीन/प्लायोसीन/ प्लीस्टोसीन/ होलोसीन)	230.0
	पैलियोजीन	(पैलियोसीन/इयोसीन/ओलिगोसीन)	655.0
	मीसोज़ॉइक	क्रिटेशियस	1455.0
		जुरैसिक	2000
		ट्राइएसिक	2510
	पैलियोज़ॉइक	परमियन	3000
		कार्बोनीफेरस (मिसिसिपियन/पैनसिल्वेनियन)	3590
		डेवोनियम	4160
		सिलूरियन	4440
		ऑर्डोविसियन	4880
		कैम्ब्रियन	5420
प्राटीरोजॉइक	नियोप्रोटीरोज़ॉइक	ईडियाकेरन	6300

स्रोत : विकिपीडिया

की दूरी तय करने के लिए कौन सा रास्ता अपनाया होगा। इसका कोई आसान सा जवाब भी नही है और जब तक पृथ्वी सूरज की तरह आग का गोला बनकर नष्ट नहीं हो जाती, तब तक इस सवाल का कोई एक जवाब हो भी नहीं सकता। इस बीच हम पीछे मुड़कर देखते हैं और यह अनुमान लगाने का प्रयास करते हैं कि शुरूआती दिनों में आरंभिक जीवन को किन परिस्थितियों से गुजरना पड़ा होगा।

आरंभिक धरती

इस नए ग्रह के आरंभिक काल में परिस्थितियां आज की स्थितियों से पूरी तरह से अलग थीं। वायुमण्डल में हाइड्रोजन, कार्बन डाइऑक्साइड, अमोनिया और मीथेन का बोलबाला था पर यह गैसीय आवरण झीना था। आज के जीवन को कायम रखने वाली ऑक्सीजन का अंश भी उस समय नहीं था। समय के साथ-साथ जलवाष्प सघन हुए और समुद्रों का निर्माण हुआ परन्तु इनका पानी शुरूआती दौर में गरम हुआ करता था।

विशालकाय ज्वालामुखी अपने अंदर से राख और लावा उगलते रहते थे और पराबैंगनी किरणों की प्राणघातक मात्रा नए ग्रह पर कहर ढा रही थी। सभी परिस्थितियां जीवन के प्रतिकूल थीं, जैसा कि ऊपरी विवरण से हम समझ सकते हैं। परन्तु धीरे-धीरे स्थितियां बदलीं।

ऐसा माना जाता है कि वायुमण्डलीय गैसों, जलवाष्प, पराबैंगनी विकिरणों और कड़कती बिजली से प्राप्त विद्युत आवेश के परस्पर सम्पर्क में आने से शर्करा, वसा, न्यूक्लिक अम्ल और अमीनो अम्लों जैसे अधिक संश्लिष्ट अणुओं का रासायनिक संश्लेषण हुआ। धीरे-धीरे, लाखों वर्षों के बीतने के साथ, इन रसायनों की मात्रा बढ़ती चली गई। इन अणुओं के बीच आपस में और एक दूसरे के बीच अधिकाधिक पारस्परिक क्रियाएं होती रहीं और जल्द ही इनकी सान्द्रता उस स्तर पर पहुंच गई जिसे डार्विन ने 'एक छोटा गर्म तालाब' कहा था या जिसे 'प्राइमोर्डियल सूप' या मूल रस कहा गया।

प्राईमोर्डियल सूप

सूप के अन्दर संश्लिष्ट या जटिल अणु, विशेषकर प्रोटीन एवं न्यूक्लिक अम्ल मौजूद थे जो कुछ सामान्य संघटकों की लम्बी श्रृंखला से मिलकर बने थे। अमीनो अम्ल आपस में श्रृंखला की तरह जुड़कर पॉलीपेप्टाइड का निर्माण करते और एकाधिक पॉलीपेप्टाईड आपस में जुड़कर प्रोटीन बनाते। इसी तरह एक शर्करा का अणु, राइबोज या डीऑक्सीराइबोज, लाक्षणिक रूप से फॉस्फोरस एसिड अणु और एक नाइट्रोजनी आधार के साथ संयुक्त होकर एक न्यूक्लियोटाईड की रचना करता। इस प्रकार के न्यूक्लियोटाइड्स के आपस में जुड़ने से न्यूक्लिक अम्ल के एक तंतु का निर्माण होता है। इस दौर में संभावनाएं अत्यधिक थीं, अवसर असीमित थे और घटनाओं के घटने के लिए काल बहुत विशाल था।

क्षमतावान अणु

इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि धरती के शुरूआती दिनों में निर्मित विभिन्न प्रकार के तत्वों में से डीऑक्सीराइबोन्यूक्लिक एसिड, जिसे संक्षेप में डीएनए कहा जाता है, की उत्पत्ति ही जीवन की उत्पत्ति की दिशा में गति प्रदान करने वाली थी। डीएनए खुद को

गुणित करने में सक्षम था और आज भी है। यह अमीनो अम्लों और इस हिसाब से प्रोटीनों, के निर्माण के लिए ब्लू प्रिंट की तरह कार्य कर सकता था। जीवन के उद्भव के लिए आवश्यक वातावरण तैयार हो चुका था परन्तु दुख की बात ये है कि इस अति महत्वपूर्ण घटना पर प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए कोई बुद्धिमान गवाह मौजूद नहीं था।

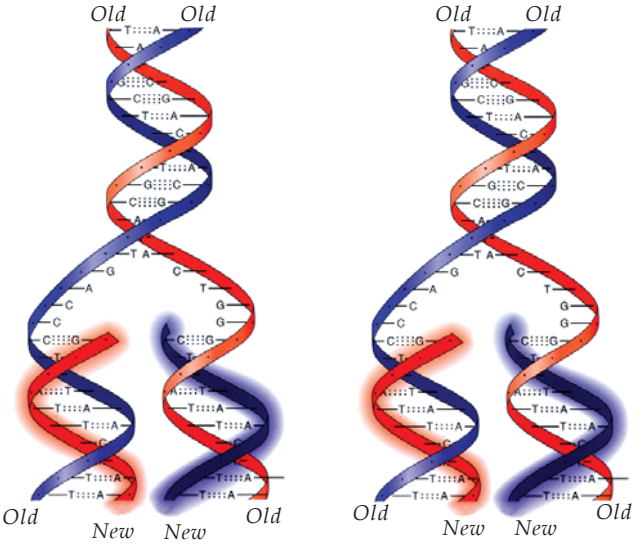

डी.एन.ए. की प्रतिकृति

डीएनए द्वारा प्रतिकृति तैयार करने में गलतियां भी होती थीं और इस प्रकार तैयार प्रति, जो मूल डीएनए से भिन्न होती थी, अपनी प्रतियां भी तैयार करती थी। मूल प्रोटीन से एक बिल्कुल अलग प्रोटीन का निर्माण हो जाता था। डेविड एटनबरो के अनुसार, 'जब यह धरती के पहले-जीवों में हुआ तो क्रमिक विकास आरंभ हुआ क्योंकि प्रतिकृति तैयार करने में हुई गलतियां ही परिवर्तन या विभिन्नताओं का कारण बनीं। इन विभिन्नताओं में ही प्राकृतिक चयन हुआ और विकास की धारा बही।'

वैज्ञानिकों की अवधारणा है कि अणुओं की स्वतः प्रवर्तित पारस्परिक क्रियाओं के कारण कुछ बहुलक आपस में जुड़े और एक कोश जैसी संरचना का निर्माण हुआ।

ये कोश पानी में अघुलनशील थे और कुछ रसायनों के लिए अर्ध पारगम्य थे। इस प्रकार कोश का भीतरी भाग एक स्वतः पूर्ण क्षेत्र था जिसके अन्दर स्वतःप्रवर्तन से निर्मित बड़े अणु संचित रह सकते थे। समय के साथ ये बड़े अणु कोशिकीय अंगों में विकसित हो गए। यह भी माना जाता है कि 'कार्यकारी अणुओं' (प्रोटीन, उत्प्रेरक) और 'सूचना अणुओं' (न्यूक्लिक अम्ल) के कोशों में भी परस्पर सामंजस्य हुआ होगा जिसके फलस्वरूप पहले 'प्री-साईट' (एक तरह की कोशिका की पूर्वज संरचना) का जन्म हुआ।

दूसरे मत के अनुसार कुछ बड़े तथाकथित 'जीवों' द्वारा छोटे 'जीवों' को निगल लिया गया होगा। इन छोटे जीवों में ऑक्सीजन को उपयोग करने की क्षमता थी और 'मेहमान' की क्षमता पर 'मेजबान' की निर्भरता के बदले उसे पोषण प्रदान किया जाने लगा। समय के साथ ये 'मेहमान' कोशिकांग बन गए जिनका कोशिका से अटूट संबंध हो गया।

आरंभिक जीवन

इस प्रकार की जटिलताओं वाली कोशिकाएं लगभग 1200 लाख वर्ष पूर्व सामने आई थीं। एटनबरो के कलैण्डर के अनुसार ऐसा सितम्बर की शुरूआत में हुआ। और अक्टूबर में, यानि 800-1000 लाख वर्ष पूर्व, जीवन का अगला विकसित रूप, स्पॉन्ज, प्रकट हुआ और इसके बाद तो जैसे एक विस्फोट हुआ और धरती पर विभिन्न प्रकार के अकशेरूकियों की उत्पत्ति हुई।

मतों का ढेर

वास्तव में हम नहीं जानते कि कई वर्षों पूर्व ये पृथ्वी कैसी थी। इस बारे में बहुत से मत सामने आए। ज्यादा बहस इस बात पर केन्द्रित रही है कि उस काल में पृथ्वी का वायुमंडल कैसा रहा होगा और जीवन की उत्पत्ति किस प्रकार हुई होगी।

आरंभिक जीव वैज्ञानिकों का मानना है कि धरती पर जीवन स्वतः ही उत्पन्न हो गया। यूनानी दार्शनिक-वैज्ञानिक अरस्तू और अन्य का उस समय मानना था कि एफिड या मांहू (एक छोटा कीट) की उत्पत्ति उस ओस से हुई है जो पौधों पर गिरती

है। उनका यह भी मानना था कि पिस्सू सड़ी-गली चीजों से पैदा हुए हैं और चूहे गन्दी घास से। परन्तु 1668 में इतालवी फिजिशियन फ्रैन्सेस्को रेडी ने साबित किया कि जब मक्खियों के अण्डे देने से मांस को बचाया गया तो उसमें कीड़े अथवा मैगट नहीं पड़े। सत्रहवीं शताब्दी के बाद से यह मत प्रभावी होने लगा कि कम से कम सभी आसानी से नजर आने वाले जीवों/प्राणियों को यदि लें तो प्रत्येक जीव की उत्पत्ति पहले से मौजूद अन्य जीव से कैसे हुई?

आखिर धरती पर जीवन की पहली शुरूआत कैसे हुई? इस सवाल का जवाब अभी भी स्पष्ट नहीं है। इसे जानने का सर्वोत्तम रास्ता यही है (चूंकि गुजरे वक्त के सफर पर जाना संभव नहीं है) कि प्रारंभिक धरती पर मौजूद परिस्थितियों की प्रतिकृति तैयार करने की कोशिश की जाए और देखें, शायद हम उन स्थितियों को एक परखनली में उतार सकें।

धरती की आरंभिक स्थितियों का प्रायोगिक प्रतिरूप

सन् 1936 में सोवियत संघ के जीव विज्ञानी ए.आई.ओपेरिन ने अपनी पुस्तक 'द ऑरिजिन आफ लाइफ ऑन अर्थ' में बताया कि ऑक्सीजन रहित वायुमण्डल में सूर्य के प्रकाश की क्रिया से कार्बनिक अणुओं को निर्मित किया जा सकता है। उनके अनुसार ये अणु कहीं अधिक जटिल रूप में आपस में जुड़ जाते हैं और फिर घुलकर एक बूंद में परिवर्तित हो जाते हैं। ये बूंद अन्य बूंदों से जुड़कर आकार बढ़ाती है और विखण्डन की क्रिया द्वारा छोटी-छोटी (पुत्री) बूंदों में बंटकर 'प्रजनन' करती है। लगभग इसी काल में, ब्रिटिश जीवविज्ञानी जे.बी.एस.हैल्डेन ने सुझाव दिया कि धरती पर जीवन से पहले के महासागरों, जो आज के महासागरों से बिल्कुल अलग थे, ने 'गर्म हल्के सूप' का निर्माण किया होगा जिसमें जीवन निर्माण के आधार तत्वों (कार्बनिक यौगिकों) का निर्माण हुआ होगा। इस विचार को बायोपॉईसिस कहा गया जिसका तात्पर्य है वह क्रिया जिसमें अजीवित स्वतःप्रतिरूपित अणुओं से जीवित पदार्थ की उत्पत्ति हो।

अमेरिकी रसायनज्ञ स्टैनले मिलर ने पृथ्वी के प्रारंभिक वायुमण्डल पर तड़ित के प्रभाव को जानने के लिए प्रयोग तैयार और निष्पादित किए। उन्होंने पृथ्वी के

वायुमण्डल के आरंभिक संघटन से मिलते-जुलते मिश्रण में एक विद्युत चिंगारी छोड़ी। यह विद्युत् मीथेन, पानी, अमोनिया और हाइड्रोजन (प्रारंभिक धरती के वायुमण्डल के समान) के गैसीय मिश्रण से गुजरी। इससे अमीनो अम्लों के एक मिश्रण की उत्पत्ति हुई। अब हम जानते हैं कि अमीनो एसिड द्वारा ही प्रोटीन का निर्माण होता है जो जीवन का आधार हैं। अन्य वैज्ञानिकों द्वारा सल्फर युक्त अणुओं, जो पृथ्वी के निर्माण से

सल्फर बैक्टेरिया का आवास

पहले मौजूद माने जाते हैं, को हल्के प्रकाश के सम्पर्क में लाया गया। प्रकाश की उपस्थिति कार्बनिक यौगिकों के पैदा होने के लिए पर्याप्त थी। ऐसे अणुओं में विशिष्ट प्रकार का कार्बन मौजूद था। पृथ्वी पर जीवन भी कार्बन पर आधारित है और इसलिए इस प्रयोग के परिणामों ने बहुत लोगों को यह अनुमान लगाने के लिए बल प्रदान किया कि शायद जीवन का आरंभ इसी प्रकार हुआ हो।

धरती पर जीवन का मूल सुदूर अन्तरिक्ष में?

ऐसे लोगों की भी कमी नहीं जो जीवन की उत्पत्ति के लिए 'पैनस्पर्मिया' में विश्वास करते हैं। पैनस्पर्मिया सिद्धांत के अनुसार धरती पर जीवन सुदूर अन्तरिक्ष से पहुंचा

है। हाल के समय में, ब्रिटिश खगोलज्ञ फ्रैड हॉयल और श्रीलंकाई गणितज्ञ एवं खगोलज्ञ चन्द्रा विक्रमसिंघे ने इस सिद्धांत को अपनी स्वीकृति दी है। वास्तव में पैनस्पर्मिया यह व्याख्या नहीं करता कि जीवन की उत्पत्ति कैसे हुई; यह सिर्फ उत्पत्ति के फोकस को धरती से दूर कर देता है।

जीवन की उत्पत्ति कैसे और कहां हुई, इस विषय पर अनेक मत होने के बावजूद इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि जीवन का आरंभ पृथ्वी पर ही हुआ और उपलब्ध सभी साक्ष्य यह साबित करने के लिए पर्याप्त हैं कि जीवन की उत्पत्ति जल में हुई और यह कि प्राणियों से पहले वनस्पतियों का निर्माण हुआ।

जीवाश्मों की खोज

गुजरे हुए भूवैज्ञानिक काल के किसी जीव के अवशेष या किसी प्रकार के संकेत अथवा निशान जीवाश्म कहलाते हैं। जीवाश्म एक कंकाल हो सकता है या फिर भूपटल पर जड़ी हुई और परिरक्षित कोई छाप भी। भूवैज्ञानिक समय मापक्रम को बांटने में बहुधा जीवाश्म महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। उदाहरण के लिए डेवोनियन काल को मछलियों का काल कहा जाता है क्योंकि इसी समय के दौरान मछलियों का विकास हुआ था। डेवोनियन के अन्त में पौधों में विकास एवं वृद्धि शुरू हो गई थी। इसे कार्बोनीफेरस काल की शुरूआत के लिए बतौर निशान तय किया गया। जीवन की उपस्थिति के सर्वाधिक पुराने साक्ष्य 3.5 से 3.8 अरब वर्ष पहले के पाए गए हैं।

सबसे पुराने वास्तविक जीवाश्म आस्ट्रेलिया के वारावूना क्षेत्र में पाए गए हैं। इन जीवों में जीवाणु सम्मिलित हैं जिनमें स्वपोषी (ऐसे जीवाणु जिनमें स्वयं के भोजन निर्माण करने की क्षमता होती है) और परपोषी जीव (जो अपना भोजन निर्माण नहीं कर सकते) दोनों ही सम्मिलित हैं। इनकी उपस्थिति हमें अतीत को वैज्ञानिक नजरिए से देखने की गुंजाइश प्रदान करती है।

अप्रत्यावर्तन बिन्दु (द पाइंट आफ नो रिर्टन)

सबसे आरंभिक जीव जलचर थे। ये अपने चारों ओर के पानी से आवश्यक पोषक तत्वों को अवशोषित करते थे। यह माना जाता है कि आदिम जीवाणु युवा धरा पर

एकत्र कार्बन यौगिकों को खाकर अपनी गुजर करता था। परन्तु उनकी संख्या में विस्फोटक वृद्धि ने उपलब्ध संसाधनों की कमी पैदा कर दी होगी। कोई भी जीवाणु जो एक नए खाद्य स्रोत को उपयोग कर सके, अत्यधिक सफल होने वाला था और कुछ सफल भी हो गए। अपने चारों ओर मौजूद रसायनों पर निर्भर रहने की बजाए उन्होंने सौर ऊर्जा एवं हाइड्रोजन को प्रयोग कर अपना स्वयं का भोजन निर्मित करना आरंभ कर दिया। पृथ्वी पर मौजूद ज्वालामुखीय गतिविधियों के चलते हाइड्रोजन की कोई कमी न थी।

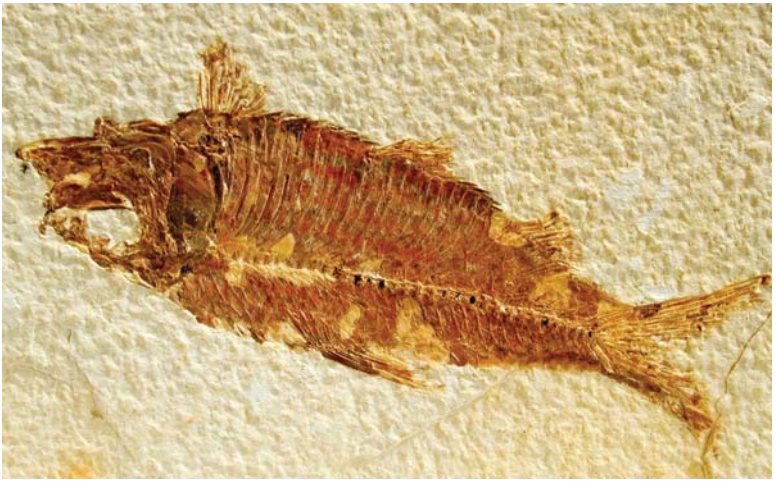

मछली का जीवाश्म

पृथ्वी के इतिहास में प्रकाश संश्लेषण की क्षमता का विकास जीवन के विकास में मील का पत्थर साबित हुआ था। यह एक ऐसा संक्रांतिकाल था जब उन सभी क्षमतावान जीवरूपों के बीच निर्भरता की नींव पड़ी जो एक दिन धरा पर राज करने वाले थे।

प्रकाश संश्लेषण और पूर्वसूचना

प्रकाश संश्लेषण शब्द दो शब्दों, प्रकाश एवं संश्लेषण से मिलकर बना है, जिसमें संश्लेषण का अर्थ है जोड़ना या साथ रखना। ये दरअसल कार्बन डाइऑक्साइड, पानी और अकार्बनिक लवणों से सूर्य के प्रकाश को ऊर्जा के स्रोत के रूप में प्रयुक्त करते

हुए हरे पौधों में पाए जाने वाले हरे रंग के क्लोरोफिल नामक पदार्थ की मदद से, कार्बोहाइड्रेट जैसे जटिल कार्बनिक तत्वों के निर्माण की प्रक्रिया है। प्रकाश संश्लेषण की अधिकांश क्रियाओं में ऑक्सीजन एक उपोत्पाद के रूप में मुक्त होती है।

जीवाणु एवं प्रकाश संश्लेषण

प्रकाश संश्लेषण में सक्षम जीवाणु स्पष्ट रूप से हरे पौधों से अलग होते हैं। वे ऑक्सीजन मुक्त नहीं करते; बैंगनी और हरे सल्फर जीवाणु में हाइड्रोजन की प्राप्ति हाइड्रोजन सल्फाइड से होती है और सल्फर उपोत्पाद के रूप में पैदा होता है। आज भी प्रकाश संश्लेषण करने वाले इन पहले जीवाणुओं से दूर के वंशज गंधक के गर्म झरनों के आस-पास पाए जाते हैं।

परन्तु वास्तव में ज्वालामुखी गतिविधियों और गर्म झरनों पर निर्भरता से जीवों को मुक्ति तब मिली जब इनमें से कुछ ने हाइड्रोजन प्राप्त करने के लिए पानी का उपयोग करना शुरू किया। ये जीव जीवाणु से कुछ अधिक विकसित थे - ये थे नीले-हरे शैवाल।

प्रकाश संश्लेषण और शैवाल

नीला-हरा शैवाल

नीले हरे शैवालों का आगमन ही वह बिन्दु था जब धरा ने खुद को जीवन के लिए स्वर्ग बनाने की ओर पहला कदम बढ़ाया। एक तरह से पौधों के आदिकालीन रूपी यह दल बधाई का पात्र है। यही वह बिन्दु था जहां से वापस लौटने की गुंजाइश नहीं रही। नीले-हरे शैवालों के प्रकाश संश्लेषण की क्रिया से ऑक्सीजन प्राप्त होनी शुरू हुई जिससे वक्त बीतने के साथ पहले ऑक्सीजन भंडारों का निर्माण हुआ। हरे नीले शैवाल वास्तविक पौधों के पूर्वगामी माने जा सकते हैं। एक अन्य महत्वपूर्ण बदलाव जो इन जीवों द्वारा लाया गया, वो था नाइट्रेट्स के

रूप में नाइट्रोजन का यौगिकीकरण। आज भी सिर्फ यही रूप है जिस रूप में पौधे इस अथाह गैसीय कच्चे पदार्थ का उपयोग कर पाते हैं।

वायुमण्डलीय ऑक्सीजन की शर्तों पर जीवन

नीले-हरे शैवालों से पहले पृथ्वी के वायुमण्डल में ऑक्सीजन मुक्त रूप से उपलब्ध नहीं थी। अब जीवों को इस नए ऑक्सीजन मय वायुमण्डल से तारतम्य बैठाने के लिए रासायनिक और जैविक बदलाव विकसित करना बाध्यता हो गई। वे या तो ऐसे क्षेत्रों में बसना शुरू हो गए जहां ऑक्सीजन नहीं थी या उनमें इसे प्रयोग करने की विधियां विकसित हो गईं। नीले-हरे शैवाल ने इसका उपयोग श्वसन क्रिया में करना आरंभ कर दिया। आज ऑक्सीजन वही गैस है जिससे हम सब सांस लेते हैं।

वायुमण्डल में मुक्त ऑक्सीजन अणु सौर विकिरण के प्रभाव के चलते बहुधा ऑक्सीजन के दो अकेले अणुओं में टूट जाता है। यह अकेला नया ऑक्सीजन अणु आक्सीजन (O_2) अणु के साथ जुड़कर ओज़ोन (O_3) का निर्माण करता है। इस प्रकार ओज़ोन के क्रमिक रूप से एकत्र होने के कारण लगभग 2 अरब वर्ष पूर्व वायुमण्डल के ऊपरी हिस्से में ओज़ोन परत का निर्माण हुआ। यह एक सुरक्षा आवरण है जो आज हमें घातक पराबैंगनी किरणों से सुरक्षा प्रदान करता है।

यहां रोचक तथ्य यह है कि पराबैंगनी किरणें नीले-हरे शैवालों की उत्पत्ति के लिए वातावरण तैयार करने में महत्वपूर्ण रही थीं। यह तो इन शैवालों में प्रकाश संश्लेषण की क्रिया का विकसित होना था जिससे जीवन का एक नया मार्ग खुला। एटनबरो के कलैण्डर के मुताबिक यह समय कहीं अगस्त के दूसरे सप्ताह के आसपास रहा होगा।

विकास ने अगली क्रांतिकारी छलांग लगाई और एककोशीय जीवों का उद्भव हुआ जिन्हें हम प्रोटोज़ोआ के रूप में वर्गीकृत करते हैं। परन्तु कोई नहीं जानता कि ये कैसे और कब हुआ।

एक से अनेक

समय बीतने के साथ शैवालों के नए प्रकार सामने आए। भूरे शैवाल, लाल शैवाल और हरे शैवाल इनमें सम्मिलित थे। शैवालों के इन नए रूपों ने विभिन्न तीव्रता वाले प्रकाश को उपयोग किया जो गहरे पानी तक पहुंच सकता था और इस तरह

पहला पक्षी जीवाश्म-आर्किओप्टेरिक्स

ये अधिक गहराइयों पर स्थापित हो गए। 8,000-12,000 लाख वर्ष पुराने लाल शैवाल के जीवाश्म और 14,000 लाख वर्ष पुराने भूरे शैवाल के जीवाश्म ज्ञात किए जा चुके हैं।

कैनेडियन रॉकीज़ की ऊंचाइयों पर खोजे गए बर्गेस शेल जीवाश्मों को विश्व की सर्वाधिक महत्वपूर्ण जीवाश्म खोज माना गया है। बर्गेस जीवाश्मों में मुलायम शरीर वाले प्राणियों के साथ ही कठोर अंगों वाले प्राणि भी सम्मिलित हैं। मुलायम शरीर वाले जीवाश्म आसानी से प्राप्त नहीं होते क्योंकि जीवाश्म के रूप में परिरक्षित होने से पहले ही वे नष्ट हो जाते हैं। जब किसी जीव का पूरा शरीर नरम होता है तो आमतौर से जीवाश्म बनने से पहले ही शरीर गल कर नष्ट हो जाता है। धरती पर पाए जाने वाले

हरे पौधों के पूर्वज हरे शैवालों के वास्तविक जीवाश्म 5,400 लाख वर्ष पुराने बर्गेस शेल से पहचाने गए हैं।

यहां पाए गए कई जीवाश्मों को वर्गीकृत कर पाने में वैज्ञानिक सफलता हासिल नहीं कर सके। जाने-माने वैज्ञानिक स्टीफन जे गोल्ड ने इस पर विचार प्रस्तुत किया कि जीवाश्मों में असाधारण विविधता यह दर्शाती है कि उस समय के जीवन प्रकारों

बाराग्वानाथिया लांगीफोलिया

में आज से कहीं अधिक विविधता थी और कई विलक्षण वंशावलियां विकास के दौरान प्रायोगिक तौर पर विकसित हुईं और विलुप्त हो गईं।

वास्तव में बर्गेस शेल ही एकमात्र स्थान नहीं है जहां से महत्वपूर्ण जीवाश्मों की खोज हुई हो। एक प्रकार की मुद्गर काई, जिसका वानस्पतिक नाम बाराग्वानाथिया लांगीफोलिया है और जिसे धरती की सबसे पुरानी वनस्पतियों में गिना जाता है, का जीवाश्म आस्ट्रेलिया में खोजा गया है। आकलन के अनुसार इसे लगभग 4,100 लाख वर्ष पुराना माना गया है। एक अन्य प्राचीन वनस्पति, कुकसोनिया, का जीवाश्म वेल्स, यूनाइटेड किंगडम में 4,150 लाख वर्ष पुराने अवशेषों से प्राप्त हुआ है। स्काटलैंड में खोजा गया राइनिया जीवाश्म भी लगभग इतना ही पुराना होगा। जीवाश्मों के ये नमूने

इस ओर इंगित करते हैं कि भूमि पर वनस्पतियों की बसावट लगभग 4150 लाख वर्ष पहले आरंभ हुई होगी।

जल से थल तक

अश्वनाल केकड़ा (जीवित जीवाश्म)

विकास की गाथा का सबसे अद्‌भुत पहलू यह है कि विकास एक सीधी रेखा में नहीं हुआ। यह एक विसर्पी या टेढ़ी-मेढ़ी, बहुत बड़ी प्रक्रिया है जिसमें कई सिरे अन्त के समीप पहुंच रहे हैं तो कई अनुकूल परिस्थिति प्राप्त कर खिल रहे हैं। ये लगभग वैसा ही है जैसे कि प्रकृति जीवन के चित्रपट पर कढ़ाई कर रही है और बारी-बारी से अलग-अलग रंगों के धागों के गुच्छे इस्तेमाल कर रही है। प्रत्येक रंग से लगाया गया हर टांका न सिर्फ पूरे चित्रण को उभारता है बल्कि यह दूसरे रंग के पैटर्न से कुछ अलग भी नजर आता है। यह एक परिवर्तनीय रचना है। जीवन पट के ताने-बाने वक्त के भंवरदार कुहासे में कहीं खो गए हैं। इस विषय पर निश्चित तौर पर कुछ भी कह पाना असम्भव है परन्तु जीवाश्मों का रिकार्ड, जहां कहीं भी ये उपलब्ध हैं, हमें जीवन के आज तक के उतार-चढ़ावों को समझने के लिए एक ठोस आधार प्रदान करता है।

पत्ती का जीवाश्म

बर्गेस शेल जीवाश्मों के भरपूर खजाने हैं परन्तु किसी भी प्रकार से ये एक सम्पूर्ण

पत्ती पर घोंघा

रिकार्ड उपलब्ध नहीं करा सकते। परन्तु ये हमें ट्राइलोबाइट्स यानि त्रिपालिक नामक अकशेरुकियों के जीवाश्म उपलब्ध कराता है। ट्राइलोबाइट्स पहले प्राणि थे जिनमें सुस्पष्ट एवं परिष्कृत आंखें विकसित हुई थीं। ट्राइलोबाइट्स विकास में पुराने खण्ड कृमियों से एक कदम आगे का प्रतिनिधित्व करते हैं। हालांकि ट्राइलोबाइट्स और उनकी तरह के अन्य प्राणि अपने पर्यावरण से तालमेल बिठाने में अत्यधिक सफल रहे थे परन्तु लगभग 2,500 लाख वर्ष पहले इनके साम्राज्य का अन्त हो गया। उनकी कई वंशावलियों में से मात्र एक ही वक्त के थपेड़ों को झेल सका। भारतीय समुद्र तटों पर पाया जाने वाला अश्वनाल केकड़ा एक जीवित जीवाश्म है जो आज भी बगैर किसी खास बदलाव के टिका हुआ है। इसे हमारे गुजरे हुए कल के साथ एक दुर्लभ जीवित संपर्क के रूप में देखा जाता है।

पंकलंघी (मडस्किपर)

ट्राइलोबाइट्स की समाप्ति के बाद केकड़े, झींगे आदि क्रशटेशियन्स यानी पर्पटीय जीवों ने अपना राज कायम किया। इन प्राणियों का बाहरी कंकाल इनके लिए अत्यन्त लाभदायक साबित हुआ। यह कंकाल पानी की भांति ही भूमि पर भी कार्य कर सकता था और इसीलिए यदि पर्पटीमय वायु में सांस लेने का रास्ता ढूंढ लेते तो उन्हें भूमि पर जाकर बसने में कोई परेशानी नहीं आने वाली थी। कुछ ने यह किया भी; जैसे केकड़ा भूमि पर आसानी से जीवित रह सकता है फिर भी प्रजनन के लिए वह पानी में वापस जाता है।

लिवरवर्ट

समुद्री अकशेरुकियों के कई अन्य वंशज भी जमीन पर बसने के लिए पानी से बाहर आए। घोंघे और कवच रहित शम्बूक या स्लग उन मौलस्क में से थे जिन्होंने जमीन को अपना निवास बनाने के लिए खुद को विकसित किया, परन्तु ये सब उसके सामने कुछ नहीं था जब पहला कशेरुकी भूमि के ऊपर आने वाला था और जीवन का चक्र तेजी से घूमने वाला था। इसके लिए परिस्थितियों के अनुकूल होने का अभी इंतजार था ।

जमीन पर पहले पौधे

ओमान के रेगिस्तानी क्षेत्रों में खोदे गए कुओं से प्राप्त सूक्ष्म जीवाश्म पानी से जमीन पर पहुंची प्रथम वनस्पतियों के बारे में महत्वपूर्ण सुराग प्रदान करते हैं। ब्रिटेन के शेफील्ड विश्वविद्यालय के चार्ल्स वैलमैन और उनके सहयोगी पीटर ऑस्टरलॉफ एवं उज्मा मोहिउद्दीन द्वारा जीवाश्मों के अध्ययन से पता चलाता है कि आज से लगभग 4,750 लाख वर्ष पूर्व वनस्पति जगत ने जमीन पर अपनी जड़ें जमाना शुरू कर दिया था। पहले जमीनी पौधे ऑर्डोविसियन काल में आए थे और ये आज के लिवरवर्ट से मिलते-जुलते थे।

शुरूआती जमीनी वनस्पतियां आकार में सूक्ष्म और देखने में पर्णांग या फर्न जैसी थीं। धरती ने इन्हें कई नए मौके दिए पर यहां कई चुनौतियां भी थीं। जो प्रजातियां यहां जीवन की शुरूआत कर रही थीं उन्हें आवश्यकता थी यहां टिकने की, पानी की लगातार आपूर्ति की और खनिज एवं पोषण अवशोषित करने की क्षमता विकसित करने की।

जमीन पर बसावट की प्रक्रिया

जमीन पर बसावट का काम रातोंरात नहीं हुआ। ये उन शैवालों से प्रारंभ हुआ होगा जो समुद्र के किनारों पर स्थित थे, परन्तु वे जमीन पर पानी से बहुत दूर तक नहीं जा

पाए होंगे क्योंकि नमी वाले क्षेत्र से बाहर की शुष्कता में जीवित रहना उनके लिए संभव नहीं रहा होगा। तब आज से लगभग 4,200 लाख वर्ष पहले कुछ वनस्पतियों ने अपने ऊपर एक मोमी आवरण या क्यूटिकल विकसित किया जिससे वे शुष्कता को झेल सकें। परन्तु अभी भी उनकी प्रजनन कोशिकाओं को जल में प्रवाहित किया जाना था इसलिए वे जलीय आवास के ऊपर ही आश्रित रहे।

दिलचस्प बात ये है कि वैज्ञानिक इस बात पर एकमत थे कि जमीनी पौधे आदिकालीन उन शैवालों से ही पनपे हैं जो जमीन पर रहने लायक विकसित हो गए थे, परन्तु 2001 तक वे इस तथ्य को पूरी तरह नहीं जान पाए थे कि ये कैसे हुआ था और आज के जीवित शैवालों में से कौन जमीनी पौधों के सबसे करीब है।

सन् 2001 में अमेरिका के मैरीलैण्ड के वैज्ञानिक चार्ल्स डेल्विच और शोध छात्र कैनेथ कैरोल ने पता लगाया कि पहली जमीनी वनस्पतियों का सबसे नजदीकी जीवित संबंधी स्वच्छ पानी के हरे शैवालों का एक दल है जिन्हें चारेल्स कहा जाता है। चारेल्स शाखयुक्त, बहुकोशिकीय, क्लोरोफिल का प्रयोग करने वाली वनस्पतियां हैं जो स्वच्छ पानी में पलती हैं। बहुधा इन्हें 'स्टोनवर्ट्स' भी कहा जाता है। क्योंकि कुछ समय बाद वनस्पति चूने पर पपड़ी बनकर जम जाती है। इसका 'तना' वास्तव में एक केन्द्रीय वृन्त या डंठल होता है जो कई केन्द्रकों वाली विशाल कोशिकाओं से बना होता है, हालांकि चारेल्स और जमीनी वनस्पति, दोनों के अंश 4000 लाख साल पुराने जीवाश्मों के रिकार्ड में ढूंढे जा सकते हैं, उनके एक समान पूर्वज इससे भी कहीं पहले विलुप्त हो गए होंगे। डेल्विच के कार्य से यह साबित हो गया कि जमीनी वनस्पतियां और चारेल्स दोनों ही एक पूर्वज से विकसित हुए थे जो स्पष्टतया एक संश्लिष्ट जीव था।

जमीन पर जिंदा रहने की जद्दोजहद

आदिकालीन जमीनी वनस्पतियों में जड़ें, पत्तियां या फूल नहीं थे। परन्तु उनमें एक सुस्पष्ट केन्द्रीय नलिका थी जो पोषक तत्वों के परिवहन के काम आती थी। उनमें अंकुरों के ऊपर 'स्टोमा' नामक छिद्र भी था जो एक वास्तविक जमीनी पौधे की विशेषता है। जमीनी पौधों में स्थिर रहने और पोषक तत्वों के अवशोषण के लिए

पहले पकड़ या आंकड़ा विकसित हुआ और बाद में जड़ों का विकास हुआ। जमीन के भीतर स्थित पानी को खींचने के लिए जड़ें आवश्यक थीं। कुछ अन्य बदलाव भी हुए। प्रकाश संश्लेषण के लिए सूर्य के प्रकाश की अधिकतम उपलब्धता आवश्यक थी इसलिए पौधों की ऊंचाई बहुत थी क्योंकि छोटे पौधे अपने पड़ोसियों की छाया में रहते और समाप्त हो जाते। जमीनी पौधों ने ज़ाइलेम (दारू) और फ्लोएम (वल्कल) भी विकसित कर लिए, ये वे चालक ऊतक हैं जो पोषक तत्वों को पत्तियों तक ले जाने के लिए आवश्यक हैं। इन ऊतकों के कारण तने को कड़ापन मिला जिससे पौधों को सीधे वृद्धि करने की सुविधा प्राप्त हुई। दलदल में पनपने वाले क्लब मॉस और हॉर्सटेल्स 30 मीटर तक ऊंचे थे जिनमें से कुछ में दो मीटर व्यास का काठ का तना था। इन पौधों के जीवाश्म अवशेषों से आज हमें कोयला प्राप्त होता है। जो वनस्पतियां अधिक जमीनी क्षेत्रों में पनपीं, उन्होंने बड़ी, फैलावदार पत्तियां विकसित कर लीं। इससे सूर्य के प्रकाश को प्राप्त करने के लिए अधिक क्षेत्र प्राप्त हुआ। वनस्पतियों की ऊंचाई में इस अचानक बढ़ोतरी ने आदिकालीन जमीनी प्राणियों पर परिस्थितियों के अनुकूल खुद को ढालने के लिए दबाव डाला।

अनावृतबीजी-शंकुकार पौधा

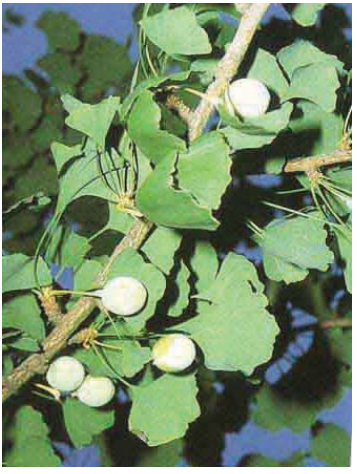

जीवित जीवाश्म-जिंकगो

बाद में जमीनी वनस्पतियों ने वास्तविक बीज विकसित कर लिए। ये बीजणुओं से अगला कदम था जिसमें प्राथमिक वनस्पतियों काई और फर्न का फैलाव हुआ

वास्तविक बीजों में एक सुरक्षा कवच के भीतर शुरूआती वृद्धि को कायम रखने के लिए भोजन भी उपलब्ध था। इससे वनस्पतियों को पानी के नजदीक रहने के बंधन से छुटकारा मिल गया। सबसे पुराने बीजयुक्त पौधे, जो आज भी जीवित हैं, शंकुवृक्ष या कोनिफर थे जो देवदार (पाईन) और स्प्रूस कुल के सदस्य हैं, इस प्रकार के आवरणरहित या नग्न बीजधारी वनस्पतियों को जिम्नोस्पर्म्स यानी अनावृतबीजी कहा जाता है। ज़िम्नोस्पर्म्स के साथ जमीन पर रेंगने वाले प्राणि या सरीसृप थे। इन दोनों के फलने-फूलने के समय को मीसोजोइक युग कहा जाता है। अपने स्वर्णिम युग, लगभग 3,000 लाख वर्ष पूर्व, से जीवित रहने वाले बीजधारी वनस्पतियों में कोनिफर सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। इसके काफी समय बाद उद्भव होने वाले साइकैड्स, जिंकगो और नीटेल्स की प्रतिनिधि प्रजातियां आज भी धरती पर पाई जाती हैं। जिंकगो एक जीवित जीवाश्म है। आधुनिक जिंकगो से संबंधित जीवाश्म आज से 2,700 लाख वर्ष पुराने परमियन काल में पाए गए हैं।

जीवन की फुलवारी

जीवन के विकास के दौरान एन्जियोस्पर्म्स यानि आवृतबीजी फूलदार पौधों का उद्भव महत्वपूर्ण घटना थी। यह घटना करीब 1,200 वर्ष पूर्व घटित हुई थी। आवृतबीजियों में लगभग सभी खेती वाले पौधे, रेशेदार पौधे और औषधिय पौधे शामिल हैं।

डहेलिया

पीले पराग वाला गुड़हल का पुष्प

धरती पर पहले जीव

मॉस यानि काई, फर्न यानी पर्णांग और लिवरवर्ट्स नम धरती पर बसने वाले पहले वनस्पतियों में थे जिनके द्वारा जलीय क्षेत्रों की सीमावर्ती जमीन को हरा गलीचा प्रदान किया गया था। इन्हीं पहले हरे गलीचों में धरती पर बसने वाले पहले जीव रेंगे थे। ये अपरिष्कृत रचनाएं खण्डयुक्त कृमि की तरह की रचनाएं थीं जो आज के कनखजूरे से बहुत अलग नहीं थीं। कॉकरोच, ड्रैगनफ्लाई या चिउरा और बिच्छू ने जमीन पर आज से 4,200 लाख वर्ष पहले ही डेरा डाल दिया था।

जैसा कि वनस्पतियों को जमीन पर बसने के लिए यहां के वातावरण के अनुकूल ढलना पड़ा था, उसी प्रकार जमीन पर बसने वाले प्राणियों को नई समस्याओं से जूझना पड़ा। पानी में श्वसन के लिए आवश्यक गिल की हवा में कोई महत्ता नहीं रह गइ थी। इसलिए श्वसन नलिकाओं का ट्रैकिया नामक एक तंत्र विकसित हुआ जो आज के कीटों में भी देखा जा सकता है।

जब वनस्पतियों ने वृद्धि में तेजी दिखाई तो प्राणियों को उनकी ऊंचाई से भोजन प्राप्त करने के लिए अपने को ढालने का प्रयत्न करना पड़ा। वैज्ञानिकों का मानना है कि पेड़ों ने एक गहन छतरी बनाकर धरती को सूर्य के प्रकाश से वंचित कर दिया होगा इसलिए वन क्षेत्रों में भूमि की सतह पर तो बिल्कुल हरियाली नहीं रही होगी या थोड़ी बहुत छिटपुट वनस्पतियां दिखाई पड़ती होंगी। प्राणियों के लिए खाद्य ऊंचाई पर मौजूद रहा होगा और भूखा नहीं रहने के लिए प्राणि को पेड़ पर चढ़ने की कला सीखनी पड़ी होगी।

लगभग इसी समय धरती पर अकशेरुकियों का साथ देने के लिए चार पैरों और नम त्वचा वाले रीढ़ की हड्डी वाले प्राणियों का प्रादुर्भाव हुआ होगा। ये प्राणि मांसाहारी थे इसलिए शाकाहारी अकशेरुकियों की सुरक्षा इसी में थी कि वे इनके मार्ग से दूर रहें। ऊंचे पेड़ पर चढ़कर जान बचाना भी एक रास्ता था। इसीलिए आरंभिक कीटों में वृक्षों पर चढ़ने की कला विकसित होने के लिए सभी कारण नजर आते हैं। परन्तु आरंभिक वृक्षों पर चढ़ना अत्यधिक श्रम वाला कार्य था। इसलिए समय के साथ कुछ अकशेरुकियों ने उड़ने की क्षमता का विकास कर लिया। पंखयुक्त कीटों का विकास लगभग 3,000 लाख वर्ष पहले हुआ होगा। हवा में उड़ने वाले वे पहले जीव थे और लगभग 1,000 लाख वर्ष तक उन्होंने हवा पर राज किया। सबसे पुराने उड़ने वाले

कीटों में ड्रैगनफ्लाई का नाम आता है जो आज की तरह नाजुक और जालीदार पंखयुक्त नहीं, बल्कि विशालकाय (जिनके पंखों का फैलाव 70 सें.मी. का था) थे। ये धरती पर कभी भी रहे हुए कीटों में सबसे विशाल थे।

धरती पर पहली वनस्पति और पहले प्राणि के बीच अंतःक्रिया

समय के साथ वनस्पतियों ने उड़ने वाले कीटों से फायदा उठाना शुरू कर दिया। प्राचीन वनस्पतियों में प्रजनन बीजाणुओं पर निर्भर था जो पानी की धारा या हवा के साथ प्रसारित होते थे और जहां जाकर गिरते वहीं उग जाते। परन्तु इस प्रक्रिया में असफलताएं ही अधिक थीं और जैविक संसाधनों के लिहाज से यह महंगा सौदा था।

परागण क्रिया करता एक वाहक जीव (वाहक)

सर्वप्रथम विकसित पराग पैदा करने वाले पौधे से परागकणों के प्रसार के लिए हवा पर निर्भर रहना भी कुछ अधिक बेहतर परिणाम नहीं दे सका।

पॉलीनेशन या परागण वह क्रिया है जिसके बाद बीज का निर्माण होता है। परागण, दरअसल, एक फूल के पराग का, उसी किस्म के दूसरे फूल के मादा जनन अंगों तक स्थानांतरण को कहा जाता है। इसके बाद निषेचन की क्रिया होती है और

ड्रैगनफ्लाई

अंततः बीज का निर्माण होता है। पराग का विकास तभी संभव है जबकि यह मादा अंग के ऊपर गिरे और इसके लिए हवा को विश्वसनीय नहीं माना जा सकता। संयोग के ऊपर निर्भर करने वाली इस क्रिया को सफल करने की जद्दोजहद में शुरूआती पराग उत्पादन करने वाले पौधों को बेहिसाब मात्रा में पराग का निर्माण करना पड़ता था जिसकी बहुत बड़ी मात्रा बरबाद होती थी और निषेचन की भी कोई गारंटी नहीं थी।

अब उड़नकीटों के साथ एक समर्थ कार्यकर्ता उपलब्ध था जिसे परागण का कार्य सौंपा जा सकता था। इन कीटों का उपयोग डाकिए के तौर पर करते हुए अधिकाधिक लाभ लेने के लिए आवश्यक था कि पराग और मादा कोशिकाएं नजदीक स्थित हों जिससे प्रजनन संबंधी पदार्थ को उठाकर निर्धारित स्थान तक पहुंचाने में आसानी रहे और शायद यही वह कारण था जिसने फूलों के विकास की नींव डाली और जिससे एन्जियोस्पर्म्स यानी आवृतबीजी अस्तित्व में आए।

आरंभिक पुष्प हर उस मेहमान का स्वागत करते थे, जो भी उनके ऊपर उतरता था। परन्तु बहुत ज्यादा अतिथियों का तात्पर्य था कि मेजबान बहुत से अन्य प्रकार के पौधों से भी पराग प्राप्त कर रहा है और इस तरह उसके स्वयं से संबंधित पराग भी दूसरी जगह भटक रहे हैं। एक प्रजाति का पराग दूसरी प्रजाति में जमा होने पर बेकार हो जाता है। इसलिए समय बीतने के साथ एक पुष्प विशेष और इसके लिए विशेष परागण कार्यकर्ता के एक साथ विकास की प्रवृत्ति विकसित हुई। यही वह काल था जब धरती रंगों से भर गई क्योंकि पुष्प परागण एजेन्ट को आकृष्ट करने के लिए रंगों का प्रयोग करने लगे और बदले में उन्हें मधु और पराग देकर पुरस्कृत करने लगे।

कीट हमें दिखाई न देने वाले वर्णक्रम या स्पेक्ट्रम के रंग देख सकते हैं। एक पुष्प किसी कीट को कैसा दिखाई पड़ता है, यह जानने के लिए वैज्ञानिकों ने ऐसे कैमरे से पुष्पों के चित्र लिए हैं जो पराबैंगनी क्षेत्र में कार्य करता है। यह वर्णक्रम का वह भाग है जिसके लिए कीटों की आंखें संवेदी हैं। परिणाम अविश्वसनीय थे। पंखुड़ियों के ऊपर रंगीन बिन्दियां

और छोटी रेखाएं नजर आ रही थीं। इन्हें मधु मार्गदर्शक कहा जाता है। इस प्रकार के निशान मानव आंख के लिए बिना किसी सहायता के अदृश्य रहते हैं। ये निशान लगभग वैसे ही होते हैं जैसे कि किसी हवाई अड्डे के रनवे पर बने होते हैं और ये क्रिया लगभग ऐसी है कि पंखुड़ियां रनवे हैं जिस पर कीटरूपी हवाई जहाज को उतरना है और पौधे ने सुरक्षित रूप से इनके उतरने के लिए इन्तजाम किए हैं।

वैज्ञानिकों में अभी यह बहस का मुद्दा है कि क्या फूलों ने कीटों की आंख के लिए संवेदी रंगों से खुद को विकसित किया या फिर कीटों की आंखों ने फूलों के सभी रंग देख पाने की क्षमता विकसित की। बहरहाल हम इतना जानते हैं कि आधी दूरी फूलों ने तय की और आधी कीटों ने और एक के विकास ने दूसरे के विकास को प्रेरित किया।

आज फूल कई प्रकारों में विकसित हो चुके हैं। डहेलिया और सूरजमुखी जैसे फूल रंगीन तो हैं पर इनमें खुशबू नहीं है। मोगरा जैसा फूल अत्यधिक सुगंध से युक्त है। स्वीट पी अत्यन्त सुन्दर रंग का होने के साथ ही मीठी सी खुशबू लिए होता है। आज भी, फूल रंग और गंध द्वारा मधुमक्खियों और तितलियों को आकर्षित करने के लिए संकेतक का कार्य करते हैं और इस प्रक्रिया में धरती पर रंग-बिरंगी और सुगंधित स्वर्गानुभूति पैदा हुई है।

जमीन पर पहले कशेरुकी

धरा पर फूलों के खिलने के साथ ही अन्य बदलाव भी हो रहे थे। लगभग 3,500 लाख वर्ष पहले, मछलियों की कुछ प्रजातियां धरती पर आने की कोशिश में लग गई थीं। इन अग्रणी प्रजातियों को भी कई समस्याओं से दो-चार होना पड़ा, जैसा कि अग्रणी वनस्पतियों को होना पड़ा था। उन्हें जमीन पर चलना और सांस लेने के लिए गैसीय ऑक्सीजन का प्रयोग

पंकलंघी (मडस्किपर)

केलाकैन्थ

करना सीखना था और समाधान कोई एक चरण में संभव नहीं था और आज भी, हम मात्र अनुमान ही लगा सकते हैं कि किस प्रकार कशेरुकियों द्वारा पानी और जमीन के बीच की खाई को पाटा गया होगा।

इस दिशा में सुराग ढूंढ रहे वैज्ञानिकों की निगाह एक मछली पर जाकर रूकी जिसे मडस्किपर कहा जाता है। मडस्किपर मछलियां आज भी गरानी यानी मैंग्रोव दलहदलों और कीचड़दार उष्णकटिबंधीय नदी के किनारों तक सीमित हैं। उनमें एक मांसल आधार होता है जो उनके पंखों के अगले जोड़े के अन्दर मौजूद हड्डियों से जुड़ा होता है। ये मछलियां इसका प्रयोग नरम कीचड़ के ऊपर सरकने के लिए लीवर के रूप में करती हैं। कोलाकैन्थ नामक एक जीवित जीवाश्म, जिसे लगभग 700 लाख वर्ष पहले विलुप्त हुआ मान लिया गया था, में भी इसके पंखों को सहारा देने के लिए इसी प्रकार की संरचना पाई जाती है। इन खण्ड-पंखों का प्रयोग बैसाखी की तरह करते हुए खुद को आगे घसीटना ही शायद वह विधि थी जिससे पहली मछलियों ने जमीन पर जाने का जोखिम उठाया था। जमीन पर सांस लेने की समस्या के समाधान के रूप में, मडस्किपर अपने मुंह में पानी रोक लेती है और ऑक्सीजन को अपने मुंह के अस्तर से सोखती है। हालांकि, यह जमीन पर लम्बे समय तक रहने के लिए लाभदायक विधि नहीं है, पर हां, छोटी-मोटी सैरों के लिए तो यह सुविधा प्रदान कर ही देती है।

लंगफिश

अन्य प्रजातियों ने स्पष्टतया कई रास्ते खोजे। 'लंगफिश' की अभी चार अलग-अलग प्रजातियां पाई जाती हैं, हालांकि 3,500 लाख साल पहले ये बहुत अधिक संख्या में पाई जाती थीं। लंगफिश के अध्ययन से कुछ सूत्र हाथ लगे कि किस प्रकार कशेरुकियों ने जमीन पर सांस लेने की समस्या से उबरना सीखा होगा।

लंगफिश दलदली क्षेत्रों की निवासी है जो गर्मी में सूख जाते हैं। जब यह दलदल सूखना शुरू होते हैं, लंगफिश खुद को नरम दलदल में दफना लेती है। पूरी गर्मियों में लंगफिश मुंह से हवा अंदर लेती हैं। इस हवा को गले की पंपिंग गति की सहायता से आहारनाल में मौजूद विशेष थैलियों में भेजा जाता है। इन थैलियों में रक्त की प्रचुर आपूर्ति होती है और इनकी दीवारें ऑक्सीजन के विसरण को झीनी होने देती हैं जिससे पानी नहीं होने के बावजूद श्वसन क्रिया चलती रहती है।

जिन वैज्ञानिकों ने लंगफिश के जीवाश्मों का अध्ययन किया है, उनके अनुसार हालांकि यह हवा को सांस के रूप में लेने का स्पष्ट ढंग है, परन्तु यह कुछ संभव प्रतीत नहीं होता कि लंगफिश या उनके वंशज ही जमीन पर स्थाई रूप से आने वाले पहले कशेरुकी थे। वैज्ञानिकों की निगाह यूस्थीनोप्टेरोन (जो कोलाकैन्थ और लंगफिश दोनों का ही संबंधी था) के जीवाश्म पर पड़ी जिसे धरती पर पहुंचने वाला संभावित जीव माना गया या कम से कम जो सबसे पहले पहुंची वंशावली के बहुत नजदीक तो होगा ही। यूस्थी-नोप्टेरोन एक संभावित जीव इसलिए है क्योंकि इसके नासाछिद्रों को मुंह की ऊपरी छत से जोड़ता हुआ एक रास्ता इसमें विकसित था। यह एक ऐसा गुण था जो सभी जमीनी कशेरुकियों में पाया जाता है।

फिर भी, बहुत सी धारणाओं और जीवन संबंधी प्रमाणों के बावजूद भी अभी तक वैज्ञानिक एक ऐसा जीवाश्म नहीं खोज पाए हैं जो पंखदार मछली और चार पैर वाले प्राणी यानी टेट्रापोड के बीच की कड़ी को दर्शाता हो।

परन्तु 2006 में प्राप्त एक जीवाश्म ने सब कुछ बदल दिया। यह जीवाश्म कनाडा के एलेस्मीयर द्वीप पर पाया गया। यह स्थान आर्कटिक क्षेत्र के उत्तरी ध्रुव से बहुत दूर नहीं है। यह जीवाश्म एक मछली और एक मगरमच्छ के संकर जैसा दिखता था। इस नई खोज को 'टिक्टालिक' नाम दिया गया, इसकी व्याख्या एक 'फिशपॉड' के रूप में की गई - थोड़ी फिश यानि मछली और थोड़ा पॉड यानी टेट्रापॉड यानि चार पैरों वाला जमीनी प्राणी, और इसे ऐसी प्रजाति के रूप में माना गया जो मछली और टेट्रापोड के बीच की दीवार को धुंधली कर देती है। टिक्टालिक डेवोनियन युग (जिसका काल 4,170 से 3,540 लाख वर्ष पूर्व) में

जीवित रहा होगा। इसमें आरंभिक पैरों वाले प्राणियों की तरह खोपड़ी, गर्दन और पसलियां थीं और साथ ही मछलियों के समान अविकसित जबड़े, पंख और शल्क भी थे। इसकी गर्दन गतिशील थी परन्तु गिल के ऊपर का हड्डियों का आवरण समाप्त हो चुका था। इससे प्रतीत होता है कि मछलियां कम से कम कुछ हद तक वायुवीय श्वसन कर सकती थीं, जैसा कि आधुनिक जमीनी चौपाए प्राणियों में होता है।

टिक्टालिक के गुणों को देखकर वैज्ञानिकों को पूरा विश्वास हो गया है कि जमीन पर रहने के लिए अनुकूलन विकास के अचानक फट पड़ने से नहीं हुआ था बल्कि यह एक लम्बी प्रक्रिया थी।

जमीन पर बसावट क्यों?

प्राणी जमीन की ओर रूख करने के लिए मजबूर हुए क्योंकि शायद समय के साथ उनके जलीय आवास सूखने लगे हों, या शायद जमीन पर भोजन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो या फिर उन दिनों जमीन पर दुश्मनों का अस्तित्व नहीं के बराबर रहा हो। कारण चाहे कुछ भी रहे हों, इससे सभी जीवन क्षेत्रों में नए परिदृश्य खुले, न सिर्फ वास्तविक रूप से बल्कि आंकड़ों के आधार पर भी।

सर्वप्रथम जमीन पर बसने वाले प्राणियों ने अपनी जड़ें पानी में ही जमाए रखीं। इनमें से कई प्राणियों की त्वचा नम थी और उन्हें सांस लेने के लिए पानी में लौटना पड़ता था। आधुनिक एम्फीबियन यानी उभयचरों जैसे मेंढक और टोड, एक ऐसी डिम्भक अवस्था से गुजरते हैं जिसमें वे गिल या गलफड़ों की मदद से सांस लेते हैं। बाद के कशेरुकी, जैसे सरीसृप, जलरोधी त्वचा के साथ काफी हद तक इस निर्भरता से छुटकारा पाने में सफल हुए। इससे उन्हें जल स्रोतों से अधिक दूरी तक घूमने की आजादी मिली और अपनी प्रजाति के लिए अधिकाधिक क्षेत्र घेरने की भी।

इस तरह जीवन अपने जल रूपी अवलम्ब से धरा और बाद में वायु को घेरने के लिए बाहर आया और आज का भरा-पूरा संसार जीवन की उस दृढ़ता का प्रमाण है जिसने आधे मौके दिए जाने के बावजूद और अत्यन्त प्रतिकूल परिस्थितियों में भी अपने पैर जमाए और फला-फूला।

3

धरती पर जीवन का वर्गीकृरण

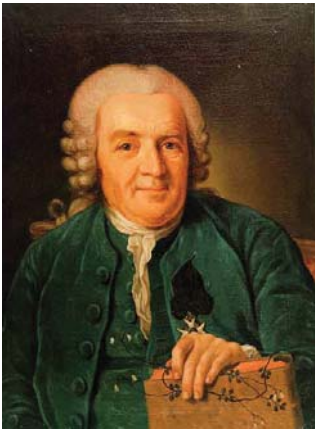

कैरोलस लिनियस

धरती पर जीवन के असंख्य रूप हैं। जीवन यहां इतने विस्मयकारी विन्यास में प्रदर्शित होता है कि यदि इसे यथोचित रूप से वर्गीकृत न किया जाए तो इसे समझना तो दूर की बात है, इसका अध्ययन करना भी असंभव होगा। वनस्पतियों और प्राणियों को वर्गीकृत करने की क्रमबद्ध प्रणाली स्वीडन के जीवविज्ञानी कैरोलस लिनियस के विचारों पर आधारित थी पर कुछ सुधारों के साथ आज भी इसी को अपनाया जा रहा है। उन्होंने वनस्पतियों और प्राणियों के वर्गीकरण से संबंधित अपने विचार 'सिस्टेमा नेचुरी' में प्रकाशित किए। सन् 1735 में, सिस्टेमा नेचुरी के प्रथम संस्करण में उन्होंने हर चीज को प्राणि, वनस्पति एवं खनिज जगत में बांटा, कुछ समय बाद उन्होंने नामकरण की 'द्विनामी पद्धति' प्रस्तुत की जिसके अन्तर्गत प्रत्येक प्रजाति की पहचान दो शब्दों के नाम से की गई - पहला नाम वंश का और दूसरा प्रजाति का विशिष्ट नाम। उदाहरण के लिए टायरेनोसॉरस रैक्स, जहां टायरेनोसॉरस वंश का नाम है जबकि रैक्स विशिष्ट या जातिगत नाम। यह प्रणाली 1758 तक सम्पूर्ण विश्व में अपना ली गई और लगभग बगैर किसी फेरबदल के आज भी मान्य है।

टायरेनोसॉरस रैक्स

जीवन में अत्यधिक विविधताएं शाखीय विकास के कारण हुईं और भिन्न पारिस्थितिकीय माहौल में ढलने के लिए जीवों में विविधताएं पैदा हुई। पहली नजर में एक जीवन को दूसरे से संबंधित करने की कोई युक्ति नजर नहीं आती। यहीं पर आकर वर्गीकरण विज्ञान या टैक्सोनॉमी की आवश्यकता पड़ती है, जिसके द्वारा एक जीव को अन्य जीवों के लिहाज से सही स्थान पर रखा जा सके। किसी भी जीव के बारे में उपलब्ध सभी जानकारियों को जानने के लिए उसकी सही पहचान करना बहुत आवश्यक है। इसके लिए पहला कदम यह है कि इसे एक अन्तर्राष्ट्रीय रूप से मान्यता प्राप्त नाम प्रदान किया जाए और अन्य ज्ञात जीवों के अनुसार इसे सही स्थान पर रखा जाए।

एक अज्ञात जीव की खोज के बाद शोधकर्ता जीव के उन संरचनात्मक लक्षणों को देखते हैं जो अन्य ज्ञात प्रजातियों के समान कार्य सम्पादित करते हों। अगले कदम में यह सुनिश्चित करना होता है कि समानताएं क्रमविकास के दौरान स्वतंत्र रूप से विकसित हुई हैं अथवा दोनों प्रजाति किसी समान पूर्वज की ही वंशज हैं। यदि दोनों किसी समान पूर्वज से विकसित हुए हैं तो ये संभवतया निकट संबंधी होंगे और इन्हें समान या समीपवर्ती जैविक वर्ग में रखा जाएगा।

वर्गीकरण के अनुक्रम तंत्र में सबसे ऊपर आने वाला संवर्ग 'जगत' कहलाता है। इस स्तर पर जीवों को कोशिकीय संरचना एवं पोषण की विधि के आधार पर श्रेणीबद्ध किया जाता है। जीव एक कोशिकीय है अथवा बहुकोशिकीय और यह खाद्य पदार्थ अवशोषित करता है, खाता है अथवा उत्पादित करता है। ये विवेचना योग्य तथ्य होते हैं। शुरूआत में यह माना गया था कि केवल दो ही जगत का अस्तित्व है; प्राणि जगत एवं वनस्पति जगत। परन्तु सूक्ष्मदर्शी एवं बेहतर वैज्ञानिक तकनीकों ने

इस आधार को विस्तृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। आज जीवविज्ञान जीवधारियों को सामान्यतया पांच जगत (किंगडम) में परिभाषित करता है।

किंगडम एनीमेलिया : बहुकोशीय गतिशील जीव, जो अपना भोजन स्वयं तैयार नहीं कर सकते परन्तु दूसरों पर निर्भर रहते हैं।

किंगडम प्लान्टी : ऐसे जीव जो अपना भोजन खुद तैयार कर सकते हैं। उदाहरण, समस्त हरे पौधे।

किंगडम प्रोटिस्टा : जीव जो एकमात्र संश्लिष्ट कोशिका से बने हों। उदाहरण, प्रोटोज़ोआ एवं एककोशीय शैवाल।

किंगडम फंगाई : ऐसे जीव जो अपना भोजन जीवित एवं निर्जीव तत्वों से अवशोषित करते हैं। उदाहरण, यीस्ट।

किंगडम मोनेरा : जीव जो एक सरल कोशिका से बने हों। उदाहरण, जीवाणु एवं नीले-हरे शैवाल।

एक किंगडम अथवा जगत को बहुत भिन्न, सुव्यक्त और निश्चित गुणों के आधार पर फायला यानी संघों में विभाजित किया जाता है। उदाहरण के लिए प्राणिजगत के अन्तर्गत कॉर्डेटा एक प्रमुख संघ है जिसमें आद्यपृष्ठवंश या नोटोकॉर्ड वाले प्राणियों को सम्मिलित किया गया है। नोटोकॉर्ड एक कठोर रॉड की तरह की संरचना होती है जिसे रीढ़ की हड्डी का एक आदिमयुगीन प्रतिरूप माना जा सकता है। अन्य संघों में एनीलिडा या खण्ड कृमि, आर्थ्रोपोडा या जुड़े हुए पैरों वाले जीव एवं इकाइनोडरमेटा, समुद्री जीव जिनमें पांच परती सममिति हो, शामिल हैं।

संघ के अन्तर्गत विभिन्न वर्ग या क्लास सम्मिलित होते हैं। एक वर्ग में वे जीव आते हैं जो कुछ मूल लक्षणों में एक समान होते हैं। उदाहरण के लिए, सभी स्तनधारी दुग्धस्राव करते हैं और उनका शरीर बालों या फर से ढका होता है। वर्ग मैमेलिया के अन्तर्गत अनेकों विविधताओं वाले प्राणि आते हैं, जैसे आदमी, जिराफ और व्हेल। संघ आर्थ्रोपोडा के अन्तर्गत इन्सैक्टा (कीट) एक वर्ग है।

एक ही वर्ग के जीवों की तुलना में एक ही गण अथवा ऑर्डर के जीव आपस में अधिक समानताएं रखते हैं। एक ही गण के जीवों को देखने से कई विकासवादी

संबंधों को प्राप्त किया जा सकता हैं वर्ग मैमेलिया में लगभग 26 गुण आते हैं। उदाहरण के लिए, मैमेलिया के अन्तर्गत मांसाहारियों को गण कार्निवोरा में रखा गया है जबकि कीटों के भक्षण पर निर्भर रहने वालों को इन्सैक्टिवोरा गण में स्थान दिया गया है। अधिक समानताओं के आधार पर एक ही गण के जीवों को पुनः फैमिली या कुल में विभाजित किया गया है।

एक ही कुल में सम्मिलित जीव आपस में काफी घनिष्ठता रखते हैं। उदाहरण के लिए, बिल्ली के कुल (फैलिडी) में चीता, तेंदुआ, बिल्ली, शेर आदि सम्मिलित हैं और इन सभी में मूंछें और वापस सिमट जाने वाले नुकीले पंजे होते हैं।

एक ही वंश या जीनस में रखे गए जीवों में और अधिक समानताएं होती हैं। उदाहरण के लिए गण कार्निवोरा के अन्तर्गत वंश कैनिस में कैनिस फैमिलिएरिस (कुत्ता), कैनिस मीजोमीलास (रजतपृष्ठ सियार), कैनिस ल्यूपस (धूसर भेड़िया), कैनिस र्यूफस (लाल भेड़िया) और कैनिस लैटराइन्स (भेड़िया) सम्मिलित हैं। वंश प्रजातियों का ऐसा समूह है जिसमें सम्मिलित जीव प्रजातियों के किसी अन्य समूह से अधिक घनिष्ठ संबंध रखते हैं। अंतिम श्रेणी में एक प्रजाति (स्पीशीज) आती है।

रजतपृष्ठ सियार

4

जीवन शृंखलाएं और जीवन जाल

पृथ्वी नाना प्रकार के जीवों की शरणस्थली है जिसमें जटिल वनस्पतियों और प्राणियों से लेकर सरल एककोशीय जीव सम्मिलित हैं। परन्तु चाहे बड़ा हो या छोटा, सरल हो या जटिल, कोई भी जीव अकेला नहीं रहता। हर कोई किसी न किसी रूप में अपने आसपास स्थित जीवों या निर्जीव पर्यावरण पर निर्भर करता है। गौर से देखने पर ज्ञात होता है कि इस प्रकृति के चित्रपट का ताना-बाना बनाने वाली प्रजातियां एक मूल सिद्धांत से बंधी हुई हैं। जीवन के इस मूल सिद्धांत का सार कुछ इस प्रकार निकलता है, "सिर्फ मरने के लिए पैदा होओ, बीच के समय में शिकार करो और शिकार बनो"।

हरे पौधों को छोड़कर, जो अपना भोजन सौर ऊर्जा को उपयोग कर स्वयं तैयार करते हैं, पृथ्वी पर जीवन के अन्य समस्त प्रकार जीने के लिए दूसरे को भोजन के रूप में प्रयोग करते हैं चाहे यह एकदम विभत्स दृश्य हो जिसमें लहूलुहान घटनाक्रम में एक बाघ हिरन का शिकार करता है या फिर इतना अनजान और अहानिकर, जिसमें एक बासी रोटी पर फफूंद उग आती है। पृथ्वी पर मौजूद सभी प्रजातियां भोजन करने के और भोजन बनने के अनिवार्य नियम से जुड़ी हुई हैं। यह हमें एक शृंखला में जोड़ता है जिसे खाद्य शृंखला कहा जाता है। खाद्य शृंखलाएं, खाद्य जाल और खाद्य पिरैमिड (सूचीस्तम्भ) ऊर्जा के बहाव को दर्शाने के तीन तरीके हैं। जीवन को कायम रखने के लिए ऊर्जा अपरिहार्य है। कोशिकीय संगठन की उच्च गुणवत्ता को बरकरार रखने के लिए ऊर्जा की निरन्तर आपूर्ति आवश्यक है। एक कोशिका को ऊर्जा

की आवश्यकता इसकी विविध गतिविधियों के लिए होती है, जिसमें कोशिका का रख-रखाव और वृद्धि सम्मिलित है।

खाद्य शृंखलाएं

खाद्य ऊर्जा के स्रोत पौधों से आरंभ होकर दूसरे को भोजन बनाने और दूसरे का भोजन बनने की प्रक्रिया में ऊर्जा का स्थानांतरण ही खाद्य शृंखला कहलाता है। वह प्राणी, जिसे खाया गया, शिकार और वह जिसने भक्षण किया, शिकारी कहलाता है। हालांकि खाद्य शृंखला की हर कड़ी पर ऊर्जा का अत्यधिक ह्रास होता है, किसी खाद्य शृंखला में एक प्राणि उसे प्राप्त होने वाली ऊर्जा का मात्र 10 प्रतिशत ही आगे प्रसारित करता है। स्थितिज ऊर्जा का 90 प्रतिशत भाग ऊष्मा के रूप में लुप्त हो जाता है। इसलिए खाद्य शृंखला में जितना आगे आप जाएंगे उतनी कम ऊर्जा की उपलब्धता पाएंगे। इससे स्पष्ट होता है कि आखिर क्यों शाकाहारियों के एक सामान्य आकार के झुण्ड के भरण-पोषण के लिए काफी संख्या में वृक्ष और हरियाली की आवश्यकता होती है और क्यों शाकाहारियों और सामान्य आकार का झुण्ड केवल कुछ ही मांसाहारियों को पाल सकता है। खाद्य शृंखला जितनी छोटी होगी, जीवों के लिए उतनी अधिक ऊर्जा उपलब्ध होगी। अधिकांश खाद्य शृंखलाएं चार या पांच कड़ियों से अधिक की नहीं होतीं हैं।

खाद्य शृंखला

खाद्य शृंखलाएं दो प्रकार की हो सकती हैं :

1. चराई खाद्य शृंखला : यह शैवाल और अन्य हरी वनस्पतियों से आरंभ होकर मांसाहारी पर समाप्त होती है।

2. अपघटक या अपरद खाद्य शृंखला : इसमें फफूंद और जीवाणु जैसे जीव सम्मिलित हैं जो अपघटन के लिए प्रमुख रूप से जिम्मेदार होते हैं।

कार्यशील अपघटक (ब्रेड पर लगी फफूंद)

खाद्य शृंखला की कड़ियां

एक खाद्य शृंखला में सामान्यतया निम्न कड़ियां होती हैं :

- मूल या प्रारंभिक उत्पादक
- मूल या प्रारंभिक उपभोक्ता
- द्वितीयक या माध्यमिक उपभोक्ता
- तृतीयक उपभोक्ता
- अपघटक

उत्पादक

उत्पादक अपना भोजन स्वयं तैयार करने में सक्षम होते हैं। स्थलीय पारिस्थितिकी तंत्र में उत्पादक सामान्यतः हरे पौधे होते हैं। स्वच्छ जल और समुद्री पारिस्थितिकी तंत्र में आमतौर पर शैवाल प्रमुख उत्पादक होते हैं। प्रकृति के चक्र में वनस्पतियां सर्वाधिक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। इनके बिना धरा पर जीवन संभव नहीं है। ये प्रारंभिक उत्पादक हैं जो सभी अन्य जीव प्रकारों को कायम रखते हैं। यह इसलिए है कि वनस्पति ही वह जीव है जो अपना भोजन खुद निर्मित कर सकता

है। प्राणी, जो भोजन निर्माण में सक्षम नहीं होते, अपनी खाद्य आपूर्ति के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से वनस्पतियों पर निर्भर रहते हैं। सभी प्राणी और जो भोजन वे ग्रहण करते हैं, उसे पौधों से संबंधित किया जा सकता है।

जिस ऑक्सीजन को हम सांस के द्वारा लेते हैं वह पौधों से प्राप्त होती है। प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में पौधे सूर्य से ऊर्जा प्राप्त करते हैं, वायु से कार्बन डाइऑक्साइड लेते हैं तथा मिट्टी से पानी एवं खनिज अवशोषित करते हैं। इसके बाद वे पानी और ऑक्सीजन को मुक्त कर देते हैं। इस चक्र में प्राणी एवं अन्य गैर उत्पादक जीव श्वसन क्रिया के माध्यम से भागीदारी करते हैं। श्वसन वह प्रक्रिया है जिसमें जीव द्वारा भोजन से ऊर्जा प्राप्त करने के लिए ऑक्सीजन का उपयोग किया जाता है और कार्बन डाइऑक्साइड छोड़ी जाती है। प्रकाश संश्लेषण और श्वसन चक्र की मदद से पृथ्वी पर ऑक्सीजन, कार्बन डाइऑक्साइड और जल का सन्तुलन बरकरार रहता है।

उपभोक्ता

उपभोक्ता वे होते हैं जो अपने भोजन के लिए दूसरों पर निर्भर रहते हैं। वे या तो सीधे ही मूल उत्पादक पर या अन्य उपभोक्ताओं पर निर्भर रहते हैं। चूंकि शाकाहारी अपना भोजन सीधे उत्पादक से प्राप्त करते हैं, उन्हें प्रारंभिक या प्रथम उपभोक्ता कहा जाता है। जानवर अपना भोजन खुद नहीं बना सकते इसलिए उनके लिए पौधों या अन्य प्राणियों को खाना आवश्यक होता है। उपभोक्ता तीन प्रकार के हो सकते हैं; जो प्राणि सिर्फ और सिर्फ वनस्पति खाते हैं, उन्हें शाकाहारी कहा जाता है, जो प्राणि दूसरे प्राणियों का भक्षण करते हैं, मांसाहारी कहलाते हैं और जो प्राणि वनस्पति एवं प्राणि दोनों को खाते हैं वे सर्वाहारी कहलाते हैं।

अपघटक

अपघटक वे जीव होते हैं जो अपक्षय या सड़न की प्रक्रिया को तेज करते हैं जिससे पोषक तत्वों का पुनः चक्रीकरण हो सके। ये निर्जीव कार्बनिक तत्वों को अकार्बनिक यौगिकों में तोड़ते हैं। अपघटक खनिज तत्वों को पुनः खाद्य शृंखला से जोड़ने के लिए मुक्त करने में सहायक होते हैं जिससे उत्पादक यानि वनस्पतियां इन्हें अवशोषित कर सकें।

खाद्य जाल

खाद्य शृंखलाएं अलग-अलग लड़ियां न होकर एक दूसरे से अंतःसंबंधित होते हैं। अधिकांश पशु एक से अधिक खाद्य शृंखला के हिस्से होते हैं क्योंकि अपनी ऊर्जा की आवश्यकता पूर्ति के लिए वे एक से अधिक प्रकार के भोजन का भक्षण करते हैं। ये आपस में जुड़ी हुई खाद्य शृंखलाएं ही खाद्य जाल का निर्माण करती हैं। ऊर्जा के बहाव को दर्शाने में खाद्य जाल कहीं अधिक वास्तविक एवं सटीक होता है।

पोषण तल

वे जीव, जिनका भोजन वनस्पतियों से समान चरणों में प्राप्त होता है, एक पोषण तल या ट्रोफिक लेवल में आते हैं। उत्पादक होने के नाते हरी वनस्पतियां पहले पोषण तल पर आती हैं। शाकाहारी दूसरी मंजिल या तल पर माने जाते हैं। मांसाहारी, जो शाकाहारियों को अपना आहार बनाते हैं, तीसरे पोषण तल पर आते हैं, जबकि मांसाहारी जो मांसाहारियों का ही भक्षण करते हैं, चौथे पोषण तल पर माने जाते हैं। एक प्रजाति अपने आहार के आधार पर एक या एक से अधिक पोषण तल पर मौजूद रह सकती है।

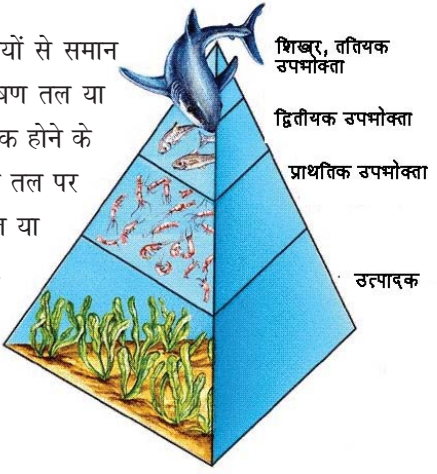

पोषण तल

पोषण संरचना एवं कार्यों को सामान्यतया पारिस्थितिकीय पिरैमिड द्वारा दर्शाया जाता है जिसमें उत्पादक आधार तैयार करते हैं और उसके बाद के स्तर क्रमशः मंजिलें तैयार करते हैं। पारिस्थितिकीय पिरैमिड तीन प्रकार के हो सकते हैं:

संख्या का पिरैमिड

यह पारिस्थितिकीय पिरैमिडों में सबसे सरल है और यह प्रत्येक तल में वैयक्तिक संख्या दर्शाता है। रोचक तथ्य यह है कि परजीवियों की दशा में, संख्या का पिरैमिड

आधार की अपेक्षा ऊपरी हिस्से में भारी होगा क्योंकि परजीवी सामान्यतया अपने परपोषी से छोटे होते हैं और बहुत से परजीवी एक ही परपोषी पर निर्भर करते हैं।

जैवभार का पिरैमिड

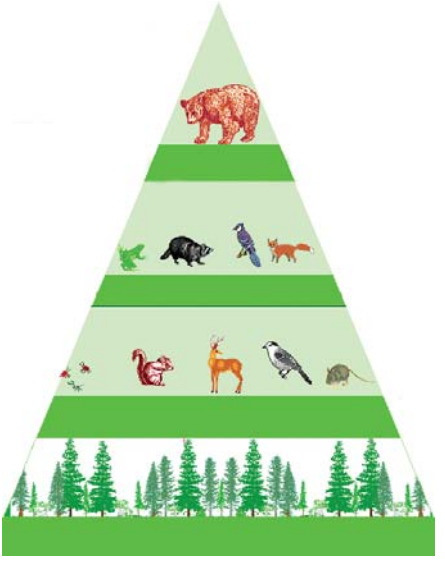

शीतोष्ण वर्षा वन जीवोम का खाद्य पिरैमिड

यह पिरैमिड प्रत्येक पोषण तल पर जीवों के कुल भार पर आधारित है। इसमें प्रतिनिधि का व्यक्तिगत वजन और संख्या को आधार बनाया जाता है। शुष्क भार ही वास्तविक जैवसंहति (बायोमास) है परन्तु यह हमेशा स्वीकार्य नहीं होता है। नमूना लेने के समय का जैवभार खड़ी फसल का जैवसंहति (स्टैंडिंग क्रॉप बायोमास) कहलाता है। स्टैंडिंग क्रॉप बायोमास उत्पादकता को नहीं दर्शा पाता है। उदाहरण के लिए, एक उपजाऊ, अत्यधिक चराई किए हुए चरागाह में एक कम उपजाऊ पर चराई नहीं किए गए चारागाह की तुलना में घास का स्टैंडिंग क्रॉप जैवसंहति तो कम होगा जबकि उत्पादकता अधिक होगी।

ऊर्जा का पिरैमिड

ऊर्जा का पिरैमिड किसी खाद्य शृंखला या जाल में आहार और ऊर्जा के संबंध को दर्शाता है। तीनों पारिस्थितिकीय पिरैमिडों में से ऊर्जा का पिरैमिड प्रजातियों के समूहों की क्रियात्मक प्रकृति का अब तक का सर्वश्रेष्ठ चित्रण प्रस्तुत करता है।

यह समझना आवश्यक है कि खाद्य शृंखलाओं और जालों में ऊर्जा पोषण तलों से प्रवाहित होती है और हर अगले तल में ऊर्जा की मात्रा घटती जाती है। अंत में

पूरी ऊर्जा नष्ट हो जाती है जिसका अधिकांश भाग ऊष्मा के रूप में लुप्त होता है। पोषक तत्व, हालांकि, खाद्य शृंखलाओं में कभी समाप्त नहीं होते और पुनर्चक्रित होते रहते हैं। इस प्रकार के चक्र में जीव, जल, वायुमण्डल और मिट्टी शामिल होते हैं। ये तत्व स्वपोषी जीवों, जिनमें भोजन निर्माण की क्षमता होती है, द्वारा कार्बनिक यौगिकों के साथ समाविष्ट कर दिए जाते हैं जहां से खाद्य जाल के विभिन्न उपभोक्ताओं में से गुजरते हुए पुनः सैप्रोफाइट यानी मृतजीवी (वे जीव जो मृत या सड़े-गले पदार्थों से अपना पोषण प्राप्त करते हैं) द्वारा अकार्बनिक रसायनों के रूप में पुनर्चक्रित कर दिए जाते हैं।

पृथ्वी के जैव-भूरासायनिक चक्र

थोड़ी मात्रा में ब्रह्माण्डीय कचरा, जो पृथ्वी के वायुमण्डल में प्रवेश करता है और धरातल तक पहुंचता है, को छोड़कर पृथ्वी पदार्थों के लिए एक बन्द तंत्र है। इसका मतलब है कि जीवन की रचनात्मक एवं रासायनिक क्रियाविधियों के लिए आवश्यक तत्व उन तत्वों से ही प्राप्त हुए हैं जो अरबों वर्ष पहले पृथ्वी के निर्माण के समय मौजूद थे। ये तत्व पृथ्वी में लगातार चक्रित होते रहते हैं। एक चक्र की अवधि कुछ दिनों से लेकर लाखों वर्ष की हो सकती है। प्रत्येक चक्र अनेकों भिन्न मार्गों को अपनाता है और इसके भिन्न आश्रय स्थल होते हैं जहां ये तत्व अलग-अलग समय तक विश्राम करते हैं। इन चक्रों को जैव-भूरसायन चक्र कहते हैं क्योंकि इनमें विभिन्न जैविक, भूवैज्ञानिक एवं रासायनिक गतिविधियां सम्मिलित होती हैं।

रासायनिक अवयव, जिनमें जीवद्रव्य के समस्त आवश्यक अवयव सम्मिलित हैं, जीवमण्डल में संचारित होते रहते हैं। पर्यावरण से जीव तक पहुंचने में और पुनः जीव से पर्यावरण तक पहुंचने के लिए ये विशिष्ट मार्ग अपनाते हैं। इसलिए जैव-भूरसायन चक्र वातावरण में अवयवों के लगातार परिवहन और परिवर्तन का नाम है। इन तत्वों का जीवों, वायु, समुद्र और जमीन के माध्यम से कई लगातार चलने वाले परस्पर संबंधित चक्रों द्वारा परिवहन होता रहता है। पृथ्वी पर समस्त जीवन और पृथ्वी की जलवायु इन्हीं चक्रों पर निर्भर करती है। सबसे महत्वपूर्ण

जैव-भूरसायन चक्र पानी, कार्बन और नाइट्रोजन के हैं। इन अवयवों और जीवन के लिए आवश्यक अकार्बनिक यौगिकों की गतिशीलता 'पोषक चक्रण' के अन्तर्गत आती है।

जैव-भूरसायन चक्र मानवीय गतिविधियों से गड़बड़ा सकते हैं और गड़बड़ा रहे हैं। जब हम अवयवों को उनके स्रोत या आश्रय स्थल से जबरदस्ती निकालकर प्रयोग करते हैं तो हम प्राकृतिक जैव-भूरसायन चक्र को अव्यवस्थित कर देते हैं। उदाहरण के तौर पर, हमने धरती की गहराइयों से हाइड्रोकार्बन ईंधनों को निकालकर और जलाकर स्पष्ट रूप से कार्बन चक्र में बदलाव कर दिया है। हमने नाइट्रोजन और फास्फोरस को कृषि उर्वरकों के रूप में बड़ी मात्रा में प्रयोग कर इनके चक्रों में भी बदलाव पैदा कर दिया है। मात्रा की आधिक्यता ने जल स्रोतों में प्रवेश कर जलीय पारिस्थितिकी तंत्र में भी अतिउर्वरता पैदा कर दी है। इन विशाल, भूमंडलीय चक्रों की सबसे रोचक बात यह नहीं है कि ये लगातार बगैर रूके चलते रहते हैं, बल्कि यह है कि हमें धरती पर उपस्थित जीवन पर उनके प्रभाव का पता भी नहीं चलता है।

5

जैव विविधता

जाने-माने संरक्षण जीवविज्ञानी थॉमस यूजीन लवजॉय ने 1980 में 'बायोलोजिकल' और 'डायवर्सिटी' शब्दों को मिलाकर 'बायोलॉजिकल डायवर्सिटी' या जैविक विविधता शब्द प्रस्तुत किया। चूंकि ये शब्द दैनिक उपयोग के लिहाज से थोड़ा बड़ा महसूस होता था, इसलिए 1985 में डब्ल्यू.जी.रोसेन ने 'बायोडायवर्सिटी' या जैव विविधता शब्द की खोज की। मूल शब्द के इस लघु संस्करण ने तुरन्त ही वैश्विक स्वीकार्यता प्राप्त कर ली। शायद ही कोई दिन जाता हो जब हम इस शब्द के सम्पर्क में नहीं आते हैं। समाचार पत्रों और शोध पत्रों में उद्धृत यह शब्द आसानी से समक्ष आ जाता है।

जैव विविधता के मायने

इतने अधिक प्रयुक्त शब्द के लिए कोई एक आदर्श परिभाषा का न होना वाकई आश्चर्यजनक है। परन्तु शब्द के अर्थ से ही इसके मायने समझ में आ जाते हैं। आखिरकार सभी जानते हैं कि 'जैविक' का अर्थ एक जीव जगत है और 'विविधता' का शाब्दिक अर्थ है प्रकार। बायोडायवर्सिटी के पहले हिस्से 'बायो' का अर्थ निकालने में भी कोई दुविधा नहीं है, यह शब्द जीवन या सजीव को इंगित करता है।

इस हिसाब से जैविक विविधता अथवा जैव विविधता का सीधा अर्थ है, "जीवित संसार की विविधताएं"। कम से कम मोटे तौर पर तो इसका यही अर्थ समझा जा

सकता है, परन्तु 'विविधता' शब्द की व्याख्या कई तरह से की जा सकती है। इससे जीवन के विविध पहलुओं का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिकों की चर्चा में सूक्ष्मभेद उत्पन्न हो जाते हैं। इसलिए 'विविधता' के अन्तर्गत न सिर्फ एक प्रजाति के अन्दर पाए जाने वाली विविधताएं अपितु विभिन्न प्रजातियों के मध्य अन्तर और पारिस्थितिकीय तंत्रों के मध्य तुलनात्मक विविधता भी शामिल की जाती है।

एक साधारण व्यक्ति जब शब्द जैव विविधता का प्रयोग करता है तो उसका जो तात्पर्य होता है वह दरअसल 'प्रजातीय जैव विविधता' है। एक प्रजाति का अर्थ है ऐसे प्राणियों का समूह जो ऐसी संतति पैदा करने की क्षमता रखते हों जो खुद जननक्षमता रखती हो। एक सामान्य आदमी के लिए इस शब्द के अन्तर्गत कबूतर से लेकर हाथी और अनार से लेकर शलगम तक की समस्त प्रजातियां सम्मिलित हैं।

परन्तु जैव विविधता जीवों की असामान्य विविधताओं तक ही सीमित नहीं रहती है। इसके अन्तर्गत जीवित पदार्थों के सम्पूर्ण संग्रह का कुल योग और जिस पर्यावरण में वे रहते हैं, अर्थात् पारिस्थितिकी तंत्र, भी सम्मिलित है। इसमें जीवों के अन्दर और उनके मध्य की विविधताओं को भी दृष्टिगत रखा जाता है। इसमें एक दूसरे के ऊपर प्रभाव डालने वाले समुदाय भी सम्मिलित हैं। इस दृष्टि से अगर देखा जाए तो जैव विविधता विभिन्न पारिस्थितिकीय तंत्रों में उपस्थित जीवों के बीच तुलनात्मक विविधता का आकलन है।

यह एक महत्वपूर्ण संकल्पना है क्योंकि सभी जीव और उनका पर्यावरण एक दूसरे पर अत्यंत नजदीकी से प्रभाव डालते हैं। इस पर्यावरण में कोई भी बदलाव या तो जीव के विलुप्त होने का कारण बनता है या फिर उनकी संख्या में विस्फोटक बढ़ोत्तरी का। कोई भी प्रजाति अपने पर्यावरण के प्रभाव से अनछुई नहीं रह सकती है। इसी प्रकार किसी प्राणी या वनस्पति की संख्या में कमी या वृद्धि इनके पर्यावरण में परिवर्तनीय प्रभाव डालता है। इससे अन्य प्रजातियों के जीवन पर भी प्रभाव पड़ता है।

वृहद रूप से देखा जाए तो वनस्पतियों, प्राणियों और सूक्ष्मजीवों को अति विविधताओं के आधार पर समझा जा सकता है; जीन से प्रजाति तक और उनके

पारिस्थितिकी तंत्र के साथ। इसलिए जैव विविधता की सबसे स्पष्ट परिभाषा होगी, "जैविक संगठन के सभी स्तरों पर पाई जाने वाली विविधताएं ही जैव विविधता है।" इस दृष्टिकोण को समझने वालों के लिए स्वीकार्य परिभाषा, "किसी क्षेत्र के जीनों, प्रजातियों और पारिस्थितिकी तंत्रों की सम्पूर्णता" होगी।

भारतीय जैव विविधता को दर्शाता चार्ट

फिर भी, जैसा कि किसी भी धारणा को दर्शाने वाले शब्दों के साथ होता है, यह शब्द स्वयं में एक गहन आकलन की योग्यता रखता है।

इसलिए आमतौर से 'प्रजाति विविधता' के लिए प्रयुक्त प्रसंग जो किसी प्रजाति की मौजूद विविधताओं का आकलन है, के स्थान पर हम 'अन्तर्जातीय विविधता' का प्रयोग कर सकते हैं जो विभिन्न जातियों के मध्य विविधताओं को दर्शाता है। यह आबादी या जीवसंख्या के बीच जननिक भेदों के साथ ही एक ही प्रजाति के सदस्यों के मध्य विविधताओं को भी दर्शाता है।

हम 'पारिस्थितिकी विविधता' की भी चर्चा कर सकते हैं जो संगठन के उच्चतर स्तर, पारिस्थितिकी तंत्र की विविधता है।

अदृश्य जैव विविधता

यह तथ्य आमतौर पर हमारी निगाह में आने से चूक जाता है कि पृथ्वी की अधिकांश जैव विविधता सूक्ष्मजीवी है। समसामयिक जैव विविधता विज्ञान की आलोचना इस बात के लिए होती है कि यह 'दृष्टिगोचर विश्व पर ही दृढ़ता से टिका है'। 'दृष्टिगोचर' शब्द से यहां तात्पर्य नंगी आंखों से दिखने वाली वस्तु से है। यह तथ्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि सूक्ष्मजीव जीवन बहुकोशिकीय जीवन से कहीं अधिक विविधता रखता है। परन्तु जब हम जैव विविधता की बात करते हैं तो हम शायद ही सूक्ष्मजीवों को दृष्टिगत रखते हैं। यह अत्यावश्यक है कि हम हमारे चारों ओर मौजूद अदृश्य जैव विविधता की ओर अधिक ध्यान दें। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि ये अदृश्य सूक्ष्मजीव ही ऐसे कई पारिस्थितिकी चक्रों में भूमिका अदा करते हैं जो जीवन की गाड़ी को चलाने में महत्वपूर्ण हैं।

क्या हो आदर्श परिभाषा?

यह स्पष्ट है कि लोग जब जैव विविधता की बातें करते हैं तो भ्रांति पैदा होने की स्थिति रहती है। हम जानते हैं कि असंदिग्धता ही अच्छे विज्ञान का प्रमाण है। इसलिए 1992 में रियो डी जेनेरियो में आयोजित संयुक्त राष्ट्र पृथ्वी सम्मेलन में जैव विविधता की मानक परिभाषा को अपनाने का निर्णय लिया गया। अन्ततः जैव विविधता को निम्नानुसार परिभाषित किया गयाः "समस्त स्रोतों, यथा अन्तर्क्षेत्रीय, स्थलीय, समुद्री एवं अन्य जलीय पारिस्थितिकी तंत्रों के जीवों के मध्य अन्तर और साथ ही उन सभी पारिस्थितिकी समूह, जिनके ये भाग हैं, में पाई जाने वाली विविधताएं; इसमें एक प्रजाति के अन्दर पाई जाने वाली विविधताएं, विभिन्न जातियों के मध्य विविधताएं एवं पारिस्थितिकी तंत्रों की विविधताएं सम्मिलित हैं।"

संयुक्त राष्ट्र जैविक विविधता सभा द्वारा इस परिभाषा को अपना लिया गया। दुनिया के कुछ देशों, जिनमें एन्डोरा, ब्रुनेई, दार-अस-सलाम, होली सी, ईराक, सोमालिया, तिमोर-लेस्ते और संयुक्त राज्य अमेरिका को छोड़कर शेष विश्व ने इसे स्वीकार कर लिया। एक प्रकार से यही उस एकमात्र, कानूनी रूप से स्वीकृत जैव विविधता की सबसे नजदीकी परिभाषा है जिसे वैश्विक स्वीकार्यता प्राप्त है।

जैव विविधता को हम चाहे जैसे भी परिभाषित करें, इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि यह अरबों वर्षों के विकास का परिणाम है जिसे प्राकृतिक गतिविधियों द्वारा आकार प्रदान किया गया है और वर्तमान समय में अधिकतर, यह मानवीय कारगुजारियों से प्रभावित हो रहा है, इससे एक जैव-जाल का निर्माण होता है। जिसके हम एक अटूट हिस्से हैं और जिस पर हम जीने के लिए निर्भर करते हैं।

रोचक बात यह है कि मान्यता प्राप्त मानक परिभाषा उपलब्ध होने के बावजूद भी जीवविज्ञान के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिक जैव विविधता के विभिन्न पहलुओं पर अपना ध्यान केन्द्रित कर रहे हैं।

नागफनी की विविधता

जीवविज्ञानी के लिए जैव विविधता

जीवविज्ञानियों के नजरिए से जैव विविधता जीवों एवं प्रजातियों तथा उनके मध्य प्रभावों का सम्पूर्ण वर्णक्रम है। वे इस बात का अध्ययन करते हैं कि पृथ्वी पर जीवों की उत्पत्ति कैसे हुई, किस प्रकार वे विभिन्न प्रकार विलुप्त हुए। बहुत सी प्रजातियां

सामाजिक प्रवृत्ति की होती हैं जो अपनी प्रजाति के अन्य सदस्यों एवं अन्य प्रजातियों से पारस्परिक क्रिया कर अपने जीवित रहने की दर को अधिकतम रखती हैं। ऐसी प्रजातियां जीवविज्ञानियों के लिए विशेष आकर्षण होती हैं।

परिस्थितिविज्ञानी के लिए जैव विविधता

परिस्थितिविज्ञानी जैव विविधता का अध्ययन न सिर्फ प्रजातियों के संदर्भ में करते हैं अपितु प्रजाति के निकटतम वातावरण और उस वृहद परिक्षेत्र, जिसमें वह निवास करते हैं, के संदर्भ में भी करते हैं। प्रत्येक पारिस्थितिकी तंत्र में जीव एक सम्प्रगता का हिस्सा होते हैं जो न सिर्फ अन्य जीवों बल्कि उनके चारों ओर मौजूद वायु, जल और मिट्टी से भी परस्पर प्रभावित होते हैं। यही वह पहलू है जिस पर ज्यादातर पारिस्थितिकीय अध्ययन केंद्रित होते हैं।

आनुवंशिकी विज्ञानी के लिए जैव विविधता

आनुवंशिकी विज्ञानियों का मानना है कि वास्तविक जैव विविधता जीनिक विविधता पर ही निर्भर करती है। उनके लिए जैव विविधता जीनों की विविधता से ही सम्बद्ध है। वे म्यूटेशन यानी उत्परिवर्तन, जीन-विनिमय एवं डीएनए के स्तर पर होने वाली परिवर्तनात्मक सक्रियता, जिससे विकासवाद को बढ़ावा मिलता है, जैसी क्रियाओं का अध्ययन करते हैं। हालांकि, अत्यन्त विस्तृत जीनोम मैपिंग एवं आनुवंशिकता, जिसके अध्ययन में बहुत समय लगता है, के बिना जीनिक जैव विविधता को मापना आसान नहीं है।

बहरहाल, कार्यशैली में दिखाई देने वाले अन्तरों के बावजूद सभी वैज्ञानिक जैव विविधता की महत्ता एवं जहां तक संभव हो, इसे परिरक्षित रखने की आवश्यकता पर एकमत हैं।

और ऐसा कर पाने के लिए हमें जानना होगा कि करना क्या है?

6

जैव विविधता का विस्तार

पृथ्वी पर जीवन के विविध रूप एक समान वितरित नहीं है। जीवों का वितरण जलवायु, ऊंचाई और मिट्टी के आधार पर भिन्नता रखता है। धरा के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में अनेक प्रकार के वनस्पति एवं प्राणी पाए जाते हैं। उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में प्रजातियों का वितरण अधिक है। ध्रुवीय और आसपास के क्षेत्र वहां पाई जाने वाली प्रजातियों के प्रकार के मामले में काफी गरीब हैं। अधिकांश स्थलीय विविधता उष्णकटिबंधीय वनों में पाई जाती है।

अभी तक लगभग 17.5 लाख प्रजातियों की पहचान की गई है जिसमें से अधिकांश कीट हैं। वैज्ञानिकों का मानना है कि पृथ्वी पर वास्तव में 130 लाख प्रजातियां हैं। हालांकि प्रजातियों का अनुमानित विस्तार 30 से 1000 लाख का है। नई प्रजातियों की खोज लगातार जारी है और बहुत सी प्रजातियों की खोज होने के बावजूद भी उन्हें अभी वैज्ञानिक ढंग से वर्गीकृत किया जाना है।

जैव विविधता - वर्तमान परिदृश्य

इस विषय की महत्ता का प्रमुख कारण यह है कि हम जीवसंख्या और प्रजातियों के विलुप्त होने में योगदान दे रहे हैं। यह सचमुच एक गंभीर खतरा है कि जैव विविधता को पूरी तरह जानने से पहले ही इस समृद्ध जैव विविधता का ह्रास हो रहा है। उदाहरण के लिए हम वनों को प्रलेखित या अध्ययन करने से पहले ही काट डालते

हैं कि वहां क्या था। इसमें न सिर्फ वृक्ष नष्ट होते हैं अपितु उनके साथ वे समस्त प्राणी, छोटे पौधे, शाक और लताएं भी समाप्त हो जाते हैं जो उन पर आश्रित रहते हैं। पत्तियों की बिछाली के अभाव में और कदाचित् रासायनिक खादों की अधिकता के कारण समय के साथ मिट्टी की प्रकृति में भी बदलाव आ सकता है।

हम अपनी प्राकृतिक वानस्पतिक विविधताओं को कृत्रिम एकरूपता में परिवर्तित करते जा रहे हैं। हालांकि जनसंख्या विस्फोट जैसी स्थितियों का दबाव इस प्रकार के

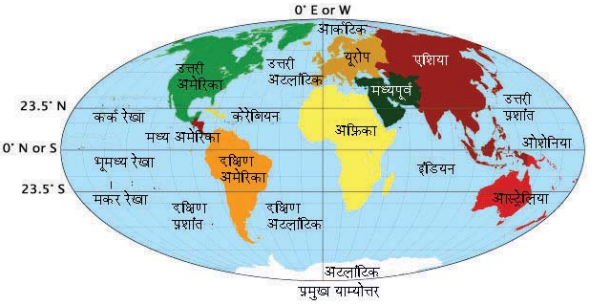

उष्ण कटिबंधी क्षेत्र में प्रजाति वितरण अधिक होता है

कार्यों को अंजाम देने के लिए बाध्य करता है। इसके कारण होने वाले खतरों से नजरें नहीं फेरी जा सकतीं है। विविधताओं पर रोक लगाने से भविष्य में होने वाले विकास में रूकावट आ सकती है। एक अचानक आने वाली विपदा से एक प्रधान प्रजाति के विलुप्त हो जाने का खतरा रहता है। विविधता एक पट्टिका है जिसमें से प्रकृति चयन करती है। विविधताओं को रोकने का अर्थ है भविष्य में किसी दुर्घटना के लिए रास्ता तैयार करना।

जैव विविधता मानवीय गतिविधियों से प्रभावित होती है। तेज और अत्यधिक औद्योगीकरण का प्रतिफल प्रदूषण के रूप में सामने आया है। एक प्रदूषित पर्यावरण, यहां तक कि पर्यावरण में बदलाव, किसी भी ऐसी प्रजाति के जीवन के लिए खतरा पैदा कर देता है जो इसके अनुकूल खुद को नहीं ढाल पाती है। पहले ही बहुत सी प्रजातियां हमेशा के लिए विलुप्त हो चुकी हैं। बहुत सी अन्य विलुप्त होने की कगार पर खड़ी हैं। विलुप्तता वह स्थिति है जब किसी प्रजाति विशेष का कोई भी सदस्य न

बचा हो। एक बार विलुप्त हो जाने के बाद किसी प्रजाति को वापस लाने का कोई उपाय नहीं है।

सर्वाधिक संकटग्रस्त प्रजातियों की ओर तुरन्त ध्यान देने की आवश्यकता है इससे पहले कि एक प्रजाति विशेष उस अन्तिम स्थिति पर पहुंच जाए जहां इसके सदस्यों की संख्या एक निश्चित संख्या से कम रह जाए। यह संख्या वह अंतिम सबसे कम संख्या है जो एक जीवित जनसंख्या को बरकरार रखने के लिए आवश्यक होती है।

एक आम आदमी द्वारा इस जादुई अंक की महत्ता हमेशा नहीं समझी जा सकती है। उदाहरण के लिए हम जानते हैं कि चूहे असाधारण प्रजननकर्ता हैं। कुछ लोगों का आकलन है कि चूहों का एक जोड़ा अपने जीवन काल में पन्द्रह हजार चूहों को पैदा कर सकता है। सैद्धांतिक रूप से, यह तर्क प्रस्तुत करना आसान है कि यदि चूहों का एक जोड़ा लगभग पन्द्रह हजार चूहे पैदा कर सकता है तो एक जोड़ा ही पूरी धरती पर इनकी जनसंख्या विस्तार हेतु काफी है। हालांकि, गैर जीवविज्ञानी इस तथ्य की ओर ध्यान नहीं देते कि पहली पीढ़ी में जीनिक विविधता का अभाव प्रजाति को कमजोर कर देगा और कुछ पीढ़ियों में ये निराशाजनक रूप से अन्तःप्रजनक हो जाएंगे और प्रजाति का विनाश हो जाएगा। यहां तक कि अत्यधिक प्रचारित क्लोनिंग भी विलुप्त प्रजाति की पूरी संख्या को वापस नहीं ला सकती है।

हमारे दादा-परदादाओं के लिए परिचित प्राणियों की कई प्रजातियां हमेशा के लिए गायब हो गईं और उन्हें सग्रहालय में रखे गए नमूनों के अलावा और कहीं नहीं देखा जा सकता है।

जैव-विविधता एवं विलुप्तता

विलुप्तता (विलोपन) प्रकृति तंत्र का एक अटूट हिस्सा है, उदाहरण के लिए डायनासोर विलुप्त प्राणी हैं। परन्तु इनकी समाप्ति प्राकृतिक विकास की प्रक्रिया के कारण हुई थी जिसमें अधिक सफल प्रजातियां कम सफल प्रजातियों के स्थान पर काबिज हो गई थीं। आज होने वाली विलुप्तताएं हमेशा इस श्रेणी में नहीं आतीं।

पृथ्वी पर बड़ी संख्या में विलुप्तताओं के पांच काल रहे हैं ये 4,400 लाख, 3,700 लाख, 2,500 लाख, 2,100 लाख एवं 650 लाख वर्ष पूर्व हुए थे। ये प्राकृतिक प्रक्रियाएं थीं। आज होने वाली विलुप्तताओं में आदमी के क्रिया-कलापों का योगदान रहता है। यह कमी जैव विविधता की दृष्टि से भविष्य के लिए खतरे की घंटी है क्योंकि विकास की प्रक्रिया में नई प्रजातियों की उत्पत्ति विलुप्त होने की वर्तमान दर से बहुत धीरे होती है। विकास और विलुप्तता की यह एक असमान दौड़ है।

यह अनुमान लगाया गया है कि वर्तमान में मौजूद जीवों की संख्या पृथ्वी पर आज तक रहे कुल जीवों की मात्र एक प्रतिशत है। दूसरे शब्दों में धरती पर 99 प्रतिशत जीवन अपनी प्रवास यात्रा समाप्त कर विलुप्त हो चुका है। उनकी विदाई के लिए उल्कापिण्ड के टकराने या हिम युग जैसे जलवायु में हुए परिवर्तनों को जिम्मेदार माना जाता है। आज हम विलुप्तता के छठे काल में चल रहे हैं जहां होने वाली विलुप्तता मानवीय गतिविधियों के कारण हो रही है।

किसी क्षेत्र विशेष में मानवीय गतिविधियों से पड़ने वाले प्रभाव को जानने की शुरूआत करने के लिए ही यह जानना आवश्यक है कि उस क्षेत्र की जैव विविधता कितनी फली-फूली है। यही आरंभिक बिन्दु या सांकेतिक बिन्दु है। इसे ज्ञात करने के लिए कई विधियां हैं।

जैव विविधता का मूल्यांकन

जैविक विविधताओं की गणना कई प्रकार से की जा सकती है। विविधता का आकलन करते समय ध्यान में रखने योग्य दो प्रमुख कारक होते हैं - प्रचुरता (समृद्धता) एवं एकरूपता। समृद्धता या प्रचुरता एक क्षेत्र विशेष में उपस्थित विभिन्न प्रकार के जीवों की संख्या की गणना है। किसी नमूने में प्राप्त प्रजातियों की संख्या जैव विविधता की प्रचुरता का पैमाना है। दिए गए क्षेत्र में प्रजातियों की संख्या जितनी अधिक होगी, वह क्षेत्र जैव विविधता की दृष्टि से उतना समृद्ध होगा। एकरूपता क्षेत्र विशेष में उपस्थित प्रत्येक प्रजाति के सदस्यों की संख्या का परिमाण है।

प्रचुरता

प्रजातीय प्रचुरता इस तथ्य को महत्व नहीं देती कि प्रत्येक प्रजाति की कितनी वैयक्तिक संख्या है। यह कम सदस्य संख्या वाली और अधिक सदस्य संख्या वाली प्रजातियों को बराबर का दर्जा देती है। इसलिए प्रजातीय प्रचुरता की गणना करते समय, एक बाघ और सौ हिरणों के एक झुण्ड का एक समान महत्व होता है।

एकरूपता

किसी क्षेत्र को समृद्ध बनाने में विभिन्न प्रजातियों की तुलनात्मक संख्या ही एकरूपता का परिमाण है। एक या दो प्रजाति बाहुल्य समाज कम विविध माना जाता है जबकि अधिक विविधता वाला वह होता है जिसमें मौजूद विभिन्न प्रजातियों का संख्या बल एक समान हो।

इसे समझने के लिए हम ऐसे क्षेत्रों की कल्पना कर सकते हैं जिनका आकार एक समान हो। यह मान लें कि प्रत्येक क्षेत्र में 67 प्राणी हैं। हम यह भी मान लेते हैं कि पहले क्षेत्र में 50 भैंसें और 17 गधे हैं और दूसरे क्षेत्र में 10 सुनहरे पीलक, 13 चीतल हिरन, 20 कस्तूरी बिल्ली, 14 अजगर और पांच अलग-अलग प्रजाति की मछलियों के दो दल हैं। यहां दूसरा क्षेत्र अधिक विविधतापूर्ण माना जाएगा। यद्यपि, एक हल्की सी नजर आदमी के नजरिए से डाली जाए तो समझ आ जाएगा कि कौन सा क्षेत्र उसके लिए ‘अधिक उपयोगी’ है।

जैव विविधता के अध्ययन में लगे वैज्ञानिक सामान्यतया जैव विविधता को मापने के लिए दो भिन्न सूचकांकों का प्रयोग करते हैं।

जैव विविधता सूचकांक

- सिम्पसन सूचकांक : यह उपस्थित प्रजातियों की संख्या के साथ ही प्रत्येक प्रजाति की प्रचुरता को आधार बनाती है। इस हिसाब से यह प्रजातीय प्रचुरता और प्रजातीय एकरूपता दोनों को महत्व देती है।

- शैनन-वीनर सूचकांक : यह एक तंत्र विशेष में नियमितता/अनियमितता का आकलन करती है। नियमितता से यहां तात्पर्य दिए गए नमूने में प्रत्येक प्रजाति के सदस्यों की प्राप्त संख्या से है।

अधिक बारीकी से अध्ययन करने के लिए परिस्थितिविज्ञानी जैव विविधता के तीन अन्य तथ्यों पर भरोसा करते हैं। ये हैं :

अल्फा विविधता: यह विविधता जीवों के ऐसे समूह से संबंधित है जो एक ही पर्यावरण के अंतर्गत जी रहे हैं या एक समान स्रोतों के लिए पारस्परिक क्रिया अथवा प्रतिस्पर्द्धा करते हैं। इसकी माप पारिस्थितिकी तंत्र में मौजूद प्रजातियों की गणना से की जाती है।

बीटा विविधता: यह पारिस्थितिकी तंत्रों के मध्य प्रजातीय विविधता है। इसमें उन प्रजातियों की संख्या की तुलना की जाती है जो प्रत्येक पारिस्थितिकी तंत्र में विशिष्ट रूप से पाई जाती हैं। बीटा विविधता उच्च होने का अर्थ है विभिन्न आवासों की प्रजातिय संघटन में कम समानताएं।

गामा विविधता: यह एक क्षेत्र विशेष के विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्रों में सम्पूर्ण विविधताओं का पैमाना है।

7

जैव विविधता समृद्ध क्षेत्र

वैश्विक जैव विविधता पूरी पृथ्वी की सम्पूर्ण जैव विविधता है और इसकी सटीक रूप से गणना करना लगभग असंभव है। हम इतना जरूर जानते हैं कि अधिकांश प्रजातियों का समय समाप्त होता जा रहा है।

वर्णित प्रजातियों में से लगभग :

- 7,50,000 कीट हैं।
- 41,000 कशेरुकी जीव हैं।
- 2,50,000 वनस्पतियां हैं।

शेष बची हुई प्रजातियों में अकशेरुकी, फफूंदी, शैवाल एवं अन्य सूक्ष्मजीव सम्मिलित हैं। वास्तव में हम अभी तक पृथ्वी पर समस्त संभावित पारिस्थितिकी तंत्र और प्राकृतिक आवास भी नहीं खोज पाए हैं। इस प्रकार के पारिस्थितिकी तंत्रों में महासागरों की गहराइयां, पेड़ों की चोटियां और उष्णकटिबंधीय वनों की मिट्टी सम्मिलित हैं। समय हमारे लिए भी बहुत तेजी से भाग रहा है। बहुत सी प्रजातियां खतरनाक ढंग से विलुप्तता के कगार पर हैं और शायद जब तक विज्ञान के ज्ञान का प्रकाश उन तक पहुंचे, उनमें से कई गुमनामी की गर्त में खो चुके होंगी।

जैव विविधता का विस्तार पूरे विश्व में एक समान नहीं है। दुनिया की कुल भूमि क्षेत्र के लगभग सात प्रतिशत हिस्से में दुनिया भर की आधी प्रजातियां निवास करती

हैं जिसमें से उष्णकटिबंधीय क्षेत्र में ही एक बहुत बड़ा हिस्सा बसता है। हालांकि इस विषय पर एक राय कायम नहीं है कि पृथ्वी के किस हिस्से में सर्वाधिक जैव विविधता है, परन्तु अमेजन वर्षावनों को इस शीर्ष पद पर काबिज करने के लिए सर्वाधिक स्वीकार्यता प्राप्त है।

वृहद जैव विविधता वाले देश

कुछ राष्ट्रों में अन्य देशों की तुलना में अत्यधिक प्रजातीय प्रचुरता एवं देशी या स्थानिक प्रजातियों की अधिक संख्या पाई जाती है। ऐसे देश वृहद जैव विविधता वाले देश

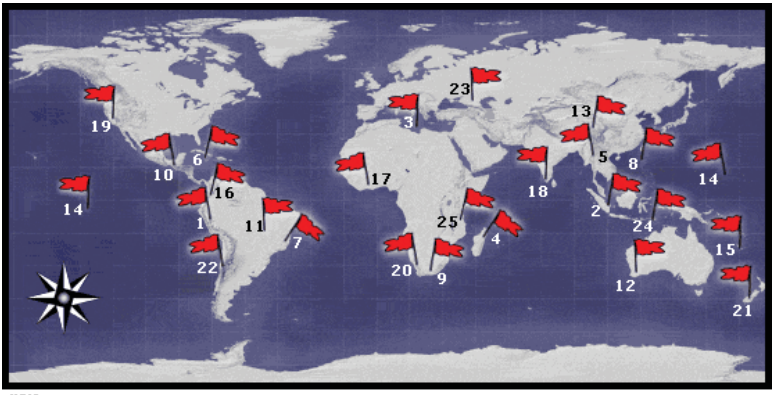

http://www.manaca.com/images/partners/ci/worldmap_hotspots3.gif

कहलाते हैं। दुनिया भर में 12 ऐसे देशों को वृहद जैव विविधता वाले देशों का दर्जा मिला हुआ है। ये हैं : भारत, आस्ट्रेलिया, ब्राजील, चीन, कोलम्बिया, इक्वाडोर, इंडोनेशिया, मेडागास्कर, मलेशिया, मैक्सिको, पेरू एवं जैरे। यदि इन देशों की जैव विविधता को संयुक्त रूप से देखा जाए तो ये विश्व भर की ज्ञात जैव विविधता का 60-70 प्रतिशत हिस्सा होगा।

भारत की समृद्ध जैव विविधता

भारत विश्व के 12 वृहद जैव विविधता वाले देशों में से एक है। विश्व भर के भूमि क्षेत्रफल के 2.4 प्रतिशत हिस्से के साथ भारत ज्ञात प्रजातियों के 7-8 प्रतिशत हिस्से का आश्रयदाता है। अभी तक वनस्पतियों की 46,000 से अधिक एवं प्राणियों की 81,000 से अधिक प्रजातियां भारत में खोजी जा चुकी हैं। यह खोज क्रमशः बॉटेनिकल सर्वे आफ इंडिया एवं जेलोजिकल सर्वे ऑफ इंडिया के तत्वावधान में की गई हैं।

भारत को फसलों की विविधता का केन्द्र माना जाता है। यह खेती की गई वनस्पतियों की उत्पत्ति के 12 केन्द्रों में से एक है। भारत को चावल, अरहर, आम, हल्दी, अदरक, गन्ना, गूज़बेरी आदि की 30,000-50,000 किस्मों की खोज का केन्द्र माना जाता है और दुनिया में कृषि को सहयोग प्रदान करने में भारत का सातवां स्थान है। भारत बहुत से जंगली एवं पालतू पशुओं का आवास है। दुनिया के 'जैव विविधता हॉटस्पॉट', ऐसे क्षेत्र हैं जहां स्थानित प्रजातियों की भरमार हो। ऐसे दो क्षेत्र भारत में हैं।

जैविक हॉटस्पॉट

जैव विविधता विशेषज्ञ डॉ. नॉर्मन मायर्स ने सबसे पहले इन जैव विविधता हॉटस्पॉट को पहचाना और 1988 और 1990 में प्रकाशित अपने दो लेखों में इन्हें प्रस्तुत किया। अधिकांश हॉटस्पॉट उष्णकटिबंधीय क्षेत्रों और जंगली इलाकों में मौजूद हैं।

1988 में किए गए अध्ययन में पहचाने गए 18 हॉटस्पॉट में से दो भारत में खोजे गए। ये दो क्षेत्र पश्चिमी घाट और पूर्वी हिमालय थे। हाल ही में संशोधित 25 हॉटस्पॉट की सूची में चुने गए दो क्षेत्र पश्चिमी घाट/श्रीलंका और भारत-बर्मा क्षेत्र को शामिल किया गया है। ये दोनों ही विश्व के आठ शीर्ष सर्वाधिक महत्वपूर्ण हॉटस्पॉट क्षेत्रों में सम्मिलित हैं।

इसके साथ ही भारत में ऐसे 26 मान्यता प्राप्त स्थानिक केन्द्र हैं जहां आज तक पहचाने गए और वर्णित पुष्पीय पौधों में से लगभग एक तिहाई पौधे पाए जाते हैं।

पश्चिमी घाट/श्रीलंका हॉटस्पॉट

पश्चिमी घाटों को सहयाद्री पहाड़ियां भी कहा जाता है। इस क्षेत्र में लगभग 1,60,000 वर्ग कि.मी. का क्षेत्रफल आता है और यह क्षेत्र देश के दक्षिणी छोर से गुजरात तक 1600 कि.मी. तक फैला हुआ है। पश्चिमी घाट दक्षिण-पश्चिम मानसूनी हवाओं को रोकते हैं इसलिए इन पहाड़ियों की पश्चिमी ढलानों पर हर साल भारी बारिश होती है। इसलिए इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि यहां पाई जाने वाली वानस्पतिक विविधताएं गणना से लगभग परे हैं। झाड़ीदार जंगल, पतझड़ी एवं उष्णकटिबंधी वर्षावन, पर्वतीय जंगल और ढलानदार घास के मैदान, यहां सभी कुछ पाया जाता है।

इस प्रकार के विविध प्राकृतिक वास स्थल अविश्वसनीय प्रजातियों को संजोए होते हैं।

भारत-बर्मा हॉटस्पॉट

यह हॉटस्पॉट उष्णकटिबंधीय एशिया के गंगा-ब्रह्मपुत्र निम्नभूमि का 23,73,000 वर्ग कि.मी. क्षेत्र घेरता है। इस हॉटस्पॉट में पारिस्थितिकी तंत्रों की आश्चर्यजनक विविधताएं देखने को मिलती हैं। इनमें मिश्रित आर्द्र सदाबहार, शुष्क सदाबहार, पतझड़ी एवं पर्वतीय वन सम्मिलित हैं। झाड़ीदार वन, काष्ठवन और बिखरे हुए बंजर वन भी कहीं-कहीं पाए जाते हैं। इस क्षेत्र में निम्नभूमि बाढ़ से तैयार दलदल, कच्छ वनस्पतियां (मैंग्रोव) और मौसमी घास के मैदान भी पाए जाते हैं।

भारतीय जैव विविधता के दो हॉटस्पॉट

प्राकृतिक वासों की विविधता के सहयोग से प्राप्त जीवन के प्रकार वास्तव में बेहतरीन विविधता का उदाहरण हैं। पर अब सवाल यह उठता है कि इस विस्तृत प्राणि एवं वनस्पति जीवन की प्लैनेट अर्थ यानी पृथ्वी ग्रह में क्या भूमिका है?

8

जैव विविधता के लाभ

जीवन के जाल से हम सब बंधे हुए हैं। इस बात से ही लाभ संबंधी जानकारी की आवश्यकता का पटाक्षेप हो जाना चाहिए। आखिरकार एक अंश कभी भी पूर्णता के महत्व का सवाल नहीं पूछता है। परन्तु होमो सैपियन्स या प्रबुद्ध इन्सान होने के नाते हम वस्तुगत रूप से जैव विविधता के लाभों का अध्ययन कर सकते हैं।

जैव विविधता की पारिस्थितिकीय भूमिका

पारिस्थितिकी तंत्र एक समुदाय और इसका भौतिक पर्यावरण होता है जिसे यह एक समय विशेष में ग्रहण करता है। सभी जीव अपने एवं अपने पारिस्थितिकी तंत्र के मध्य परस्पर संबंधों से मदद प्राप्त करते हैं। एक पारिस्थितिकी तंत्र में प्रत्येक प्रजाति कम से कम एक कार्य के लिए अच्छी होती है। इन समस्त कार्यों में से प्रत्येक प्रजातीय सामंजस्य, प्रजातीय विविधता और प्रजातीय स्वास्थ्य को निर्धारित करने वाले तंत्र का महत्वपूर्ण भाग होता है। जैव विविधता में कमी पारिस्थितिकी तंत्र को कम टिकाऊ कर देती है। यह अत्यन्त उग्र घटनाओं से अधिक असुरक्षित हो जाता है तथा इसके प्राकृतिक चक्र कमजोर पड़ जाते हैं।

पारिस्थितिकी तंत्र बहुत सी ऐसी सूक्ष्म सेवाएं भी हमें प्रदान करता है जिन्हें अनुमोदित करना तो दूर, हम उन्हें पहचान भी नहीं पाते हैं। उदाहरण के लिए, जीवाणु

एवं मिट्टी के जीव कूड़े-कचरे को अपघटित कर उर्वर भूमि का निर्माण करते हैं। पौधों में परागण क्रिया के वाहक, जैसे चमगादड़ और मधुमक्खी, यह सुनिश्चित करते हैं कि साल दर साल हमारी फसलें अंकुरित हो सकने वाले बीज पैदा करती रहें। अन्य प्राणि, जैसे लेडीबग और मेंढक फसलों के कीटाणुओं को सीमित रखने में सहायक होते हैं। इन कार्यों के प्रभाव अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं जैसे मिट्टी की उर्वरता, कूड़े-कचरे का अपघटन आदि और साथ ही हवा एवं पानी की शुद्धता, जलवायवीय नियमन एवं बाढ़/सूखा आदि को भी यह कार्य प्रभावित करते हैं।

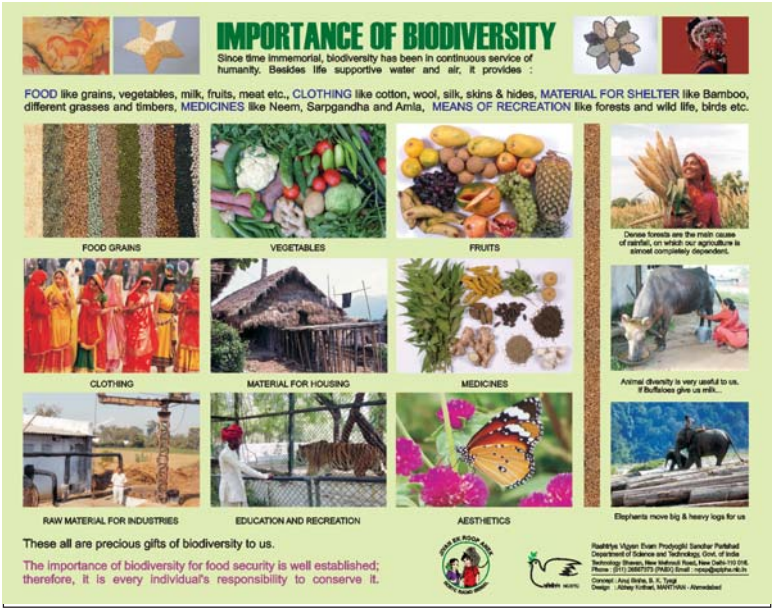

जैव विविधता की महत्ता को दर्शाता पोस्टर

जीवों की अनेकानेक किस्मों की दैनिक गतिविधियां पारिस्थितिकी तंत्रों को क्रियाशील रखने में सहायक होती हैं। इसके अतिरिक्त ये पारिस्थितिकी तंत्र जीवन को मदद देते हैं। एक पारिस्थितिकी तंत्र में जितनी अधिक विविधताएं होंगी, उतना ही अधिक ये पर्यावरण संबंधी दबाव को सहने में सक्षम होगा। स्वस्थ पारिस्थितिकी तंत्र अधिक टिकाऊ और किसी बदलाव के प्रति अधिक अनुकूलता रखते हैं, जैसे कि बाढ़ या सूखे जैसी अत्यन्त उग्र घटनाएं, जो पूरे पारिस्थितिकी तंत्र को बदल सकती हैं। इस

प्रकार के तंत्र न सिर्फ अधिक लचीले होते हैं बल्कि ये अधिक उत्पादक भी होते हैं। एक भी प्रजाति की कमी तंत्र की खुद को बरकरार रखने की क्षमता या नुकसान से उबरने की क्षमता को घटा सकती है। दूसरे शब्दों में, एक पारिस्थितिकी तंत्र में जितनी अधिक प्रजातियां होंगी, उतना ही अधिक यह तंत्र टिकाऊ होगा। इन प्रभावों को दर्शाने की क्रियाविधि बहुत जटिल है। हालांकि कुछ लोग अब जैव विविधता के 'वास्तविक' पारिस्थितिकीय प्रभावों पर चर्चा करने लगे हैं।

जैव विविधता की आर्थिक भूमिका

जैविक स्रोतों की पारिस्थितिकीय और आर्थिक, दोनों प्रकार की महत्ता है। जैविक रूप से विविधतापूर्ण प्राकृतिक पर्यावरण इन्सान के जीने की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है और अर्थव्यवस्था के लिए आधार तैयार करता है। हर चीज जो हम खरीदते या बेचते हैं, प्राकृतिक जगत में ही पैदा होती है। जैव विविधता एक अमूल्य स्रोत है जो भोजन, निर्माण, औषधियों और यहां तक कि सौंदर्य प्रसाधनों के भी काम आती है। हमारे जीने के लिए आवश्यक कच्चा माल प्रकृति से ही प्राप्त होता है और यही वैश्विक अर्थव्यवस्था का आधार है।

कुछ पदार्थ जो जैव विविधता से जुड़े हुए हैं और अर्थव्यवस्था से सीधे संबंधित हैं, वे हैं : वैज्ञानिक शोध के साधन, भोजन के लिए कच्चा माल, औषधि, उद्योग के लिए कच्चा माल, मनोरंजन और ईको-टूरिज़्म या पारिस्थितिकी मित्र पर्यटन।

औषधियां

आज हमारे काम आने वाली कई औषधियों के लिए हमें जैव विविधता को धन्यवाद देना चाहिए। इनमें सरदर्द के इलाज के काम आने वाली एस्पिरिन से लेकर कैंसर के इलाज की टैक्सोल औषधि तक शामिल हैं। प्रकृति से हमने हृदयउत्तेजक दवाएं, एन्टीबायोटिक्स, मलेरिया विरोधी यौगिक और ढेरों अन्य औषधियां प्राप्त की हैं।

नुस्खों में लिखी जाने वाली दवाओं में से एक-चौथाई या तो सीधे वनस्पतियों से प्राप्त की जाती हैं या ये वानस्पतिक तत्वों के ही रासायनिक रूप से संशोधित संस्करण हैं। इनमें से आधे से अधिक प्राकृतिक यौगिकों पर आधारित हैं। लगभग

तुलती-एक औषधिय पौधा

121 दवाइयां उच्च वनस्पतियों से प्राप्त होती हैं। फिर भी वर्षावनों की वनस्पतियों में से एक प्रतिशत से भी कम को औषधीय गुणों के लिए परखा गया है। यह अनुमान लगाया गया है कि विश्व की 25,000 पहचानी गई वानस्पतिक प्रजातियों में से मात्र 5,000 को ही उनके औषधीय गुणों के लिए परखा गया है।

कृषि

कृषि फसल विविधता पर निर्भर है। दुनिया भर को आज भोजन की आपूर्ति 30 फसलों द्वारा किया जा रहा है जो इन्सानी खाने की 90 प्रतिशत कैलोरी में हिस्सेदारी रखते हैं। कम से कम 1650 उष्णकटिबंधी वनीय वनस्पतियों को पहचाना गया है जिन्हें सब्जी

सब्जी की दुकान का एक दृश्य

फसलों की तरह उगाया जा सकता है और इससे आज उगाई जा रही कुछ ही फसलों पर हमारी निर्भरता घटाई जा सकती है।

पशुधन

इसी तरह, हमारे द्वारा पाले जाने वाले पशुधन में से 90 प्रतिशत पशु कुल 14 पशु प्रजातियों के हैं और चूंकि हम बहुत कम वनस्पति एवं प्राणि प्रजातियों पर अपने भोजन की आपूर्ति के लिए निर्भर करते हैं। इसलिए हम जलवायु में होने वाले बदलावों और फसलीय रोगों के होने की स्थिति में अत्यन्त खतरे में आ सकते हैं।

कोई आश्चर्य नहीं कि जैव विविधता के क्षरण से ही इन्सानी जीवन पद्धति से संबंधित जागृति पैदा हुई हैं। हमारे दैनिक जीवन में प्रयुक्त प्रत्येक वस्तु की जड़ें प्रकृति की गोद में पाई जा सकती हैं। इस क्षेत्र में जैव विविधता की महत्ता का अनुमान नहीं लगाया जा सकता है।

जैव विविधता की वैज्ञानिक भूमिका

जैव विविधता में विकास की भूत, वर्तमान एवं भविष्य की प्रवृत्तियों की कुंजी निहित है। यह हमें जीवन की कार्यशैली को समझने एवं टिकाऊ पारिस्थितिकी तंत्र में प्रत्येक प्रजाति के महत्व को जानने में सहायता प्रदान करती है। प्रत्येक जीवित प्रजाति के विशिष्ट आनुवंशिक द्रव्य में चिकित्सकीय एवं आनुवंशिक शोध कार्यों के लिए अपरिष्कृत द्रव्य की भूमिका निभाने की क्षमता होती है जिससे बीमारियों से लड़ने वाली दवाओं की खोज करने में सहायता मिलती है। किसी प्रजाति की मृत्यु के बाद इसका आनुवंशिक द्रव्य नष्ट हो जाता है। इसके साथ ही एक चिकित्सकीय उपचार को खोजने की संभावना के द्वार बंद हो जाते हैं।

सांस्कृतिक मान्यताएं

सभी देशी व्यक्तियों, पुरातन धर्मों, कलाकारों, कवियों, संगीतकारों एवं किस्से-कहानी सुनाने वालों की पीढ़ियों के रचनात्मक कार्यों में प्रकृति ही मूल में रखी गई है। मानवीय सांस्कृतिक अभिज्ञान, आध्यात्मिक क्रियाकलापों एवं सृजनात्मक अभिव्यक्तियों ने

अपनी मूलभूत ताकत प्रकृति से ही प्राप्त की है। सांस्कृतिक विविधता अटूट रूप से जैव विविधता से संबंधित है।

यह लगभग निर्विवाद रूप से स्थापित है कि हम पृथ्वी की एकमात्र प्रजाति के रूप में नहीं जी सकते और शायद जीना भी नहीं चाहेंगे।

बीजों और अनाजों से निर्मित रंगोली

9

जैव विविधता को खतरा

जैव विविधता का क्षरण (ह्रास) एक नकारा नहीं जा सकने वाला सत्य है। कुछ अध्ययनों से ज्ञात होता है कि वनस्पतियों की हर आठ में से एक प्रजाति विलुप्तता के खतरे से जूझ रही है। जैव विविधता के लिए पैदा हुए ज्यादातर जोखिम प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से बढ़ती जनसंख्या, जो बेलगाम दर से बढ़ रही है, से जुड़े हुए हैं। दुनिया की जनसंख्या इस समय 6 अरब से अधिक है जिसके 2050 तक 10 अरब तक पहुंचने के अनुमान व्यक्त किए गए हैं। तेजी से बढ़ती इस जनसंख्या से दुनिया के पारिस्थितिकी तंत्रों और प्रजातियों पर अतिरिक्त दबाव तो पड़ना ही है।

प्राकृतिक आवासों का विनाश

सन् 1000 से 2000 के मध्य हुए प्रजातीय विलुप्तताओं में से अधिकांश मानवीय गतिविधियों के चलते प्राकृतिक आवासों के विनाश के कारण हुई हैं। जैव विविधता को नष्ट करने में सहयोगी कारक निम्न हैं जो मानवीय गतिविधियों से संबंधित हैं : अधिक जनसंख्या, वनों का कटाव, वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा संदूषण एवं ग्लोबल वार्मिंग (या जलवायवीय परिवर्तन)। ये सभी कारक अधिक जनसंख्या से जुड़े हुए हैं जो जैव विविधता के ऊपर संयुक्त रूप से प्रभाव डालते हैं। जब किसी एक फसल को उगाने के लिए वनों को काटा जाता है तो भी जैव विविधता को दरकिनार कर दिया जाता है।

निर्दय खूनखराबा

कई बार किसी प्रजाति को मार कर उसे विलुप्त कर दिया जाता है। पैसेन्जर कबूतर (एक्टोपिस्टेस माइग्रेटोरियस), जो धरती पर एक समय बहुतायत में पाए जाते थे, मानवीय निर्दयता के कारण विलुप्त हो गया। सन् 1878 में, यू.एस.ए. के मिशीगन में हर रोज 50,000 पक्षियों को मारा जाता था और मौत का ये तांडव लगभग पांच माह चला। इस स्तर के हत्याकांड को तो प्रकृति की भरपाई करने वाली ताकत भी नहीं झेल सकती है।

यात्री (पैसेन्जर) कबूतर

विदेशी प्रजातियों का आगमन

मानव द्वारा विदेशी प्रजातियों को प्रवेश कराना जैव विविधता के लिए बहुत बड़ा खतरा है। एक विदेशी प्रजाति वह प्रजाति है जो किसी क्षेत्र विशेष की मूल निवासी नहीं होती। यह बाहर से प्रवेश कराई गई प्रजाति होती है। कभी-कभी ऐसी बाहरी प्रजाति नए पारिस्थितिकी तंत्र में आश्चर्यजनक रूप से तालमेल बिठा लेती है। वे इतने अच्छी तरह से प्रजनन करते हैं कि क्षेत्र की मूल प्रजातियों के लिए उपलब्ध स्रोतों की उपलब्धता अत्यन्त घट जाती है। इसके अलावा विदेशी प्रजाति शिकारी, परजीवी या फिर देशी प्रजातियों से कहीं अधिक आक्रामक हो सकती हैं।

हवाई द्वीप में, इस प्रकार की एक प्रजाति मैना है। इसे गन्ने के कीटों के नियंत्रण के लिए प्रवेश कराया गया था परन्तु यह लैन्टाना कैमारा नामक खरपतवार के बीजों के प्रसारक का काम करने लगी। द्वितीय विश्व युद्ध के फौरन बाद सर्प युक्त गुवाम में एक भूरा वृक्षवासी सांप दुर्घटनावश प्रवेश करा दिया गया। सांप की संख्या नाटकीय ढंग से अत्यधिक बढ़ गई और क्षेत्रीय प्राणी समूह नीचे दब गए। गुवाम में मूल रूप से पाई जाने वाली जंगली चिड़िया की 13 प्रजातियों में से अब

एक विदेशी प्रजाति (लैन्टाना कैमारा)

मात्र 3 जीवित हैं और छिपकली की 12 मूल प्रजातियों में से भी अब मात्र 3 ही जीवित हैं। ये सांप खम्बों पर चढ़कर बिजली के तारों को फंसा देते हैं और वह इलाका अंधेरे में डूब जाता है।

गुवाम की तरह, विदेशी प्रजातियों को सामान्यतया ऐसे क्षेत्रों में बसाया जाता है जहां उनके प्राकृतिक दुश्मन नहीं हों। देशी जीवों में भी बहुधा इतना अनुकूलन नहीं पाया जाता जिससे उन्हें सुरक्षा मिल सके। वैसे इस प्रकार का अनुकूलन विकास का ही अंग है और इसे विकसित होने में काफी समय लगता है। किसी अन्य प्रजाति के इनके प्रसार को रोकने और निर्धारित नहीं कर पाने पर विदेशी प्रजाति इस स्तर तक फल-फूल जाती हैं कि वे प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ देती हैं।

पर्यटन

पिछले कुछ समय से, पर्यटन ने बहुत सी समस्याओं को उत्पन्न किया है क्योंकि पर्यटकों की अत्यधिक संख्या कई बार किसी क्षेत्र विशेष पर भारी पड़ जाती है। इसीलिए हम पारिस्थितिकी मित्र पर्यटन या ईकोटूरिज़्म की बात करते हैं, तो संभावित पर्यावरणीय प्रभाव कम पड़ता है और इससे मूल निवासियों को टिके रहने में मदद

गैलेपागोस द्वीप जहां चार्ल्स डार्विन ने अपना अध्ययन कार्य किया

मिलती है जिससे वन्यजीवन एवं प्राकृतिक आवासों के संरक्षण को बल मिलता है। हालांकि, जिम्मेदार पर्यटन भी पारिस्थितिकी संबंधी समस्याएं पैदा कर सकती है। गैलेपागोस द्वीपों की कहानी इसका एक उदाहरण है।

गैलेपागोस द्वीप समूह इक्वाडोर का ही एक भाग हैं। यह 13 प्रमुख ज्वालामुखी द्वीपों 6 छोटे द्वीपों और 107 चट्टानों और द्वीपिकाओं से मिलकर बना है। इसका सबसे पहला द्वीप 50 लाख से 1 करोड़ वर्ष पहले निर्मित हुआ था। सबसे युवा द्वीप, ईसाबेला और फर्नेन्डिना, अभी भी निर्माण के दौर में हैं और इनमें आखिरी ज्वालामुखी उद्गार 2005 में हुआ था। ये द्वीप अपनी मूल प्रजातियों की बहुत बड़ी संख्या के लिए प्रसिद्ध हैं। चार्ल्स डार्विन ने अपने अध्ययन यहीं पर किए और प्राकृतिक चयन द्वारा विकासवाद का सिद्धांत प्रतिपादित किया। यह एक लोकप्रिय पर्यटन स्थल है। 2005 में लगभग 1,26,000 लोगों ने पर्यटक के रूप में गैलेपागोस द्वीपसमूह का भ्रमण किया। इससे न सिर्फ द्वीपों पर मौजूद साधनों को खामियाजा भुगतना पड़ा बल्कि पर्यटकों की बहुत बड़ी संख्या वन्यजीवन को भी विक्षुब्ध कर सकती है। परेशानी को और बढ़ाने के लिए नई प्रजातियों या नई बीमारियों का प्रवेश स्थिति को बिगाड़ सकता है। पर्यटन अब इन द्वीपों पर जैव विविधता के लिए एक गंभीर समस्या का रूप धारण करता जा रहा है।

प्राकृतिक सुरक्षा से खिलवाड़

आमतौर पर यह हर कोई नहीं जानता कि किसी विशिष्ट प्रजाति की समृद्ध विविधता को दूसरी प्रजातियों से प्राकृतिक अवरोध (जैसे महासागर) सुरक्षा प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिए यदि आस्ट्रेलिया एक द्वीप नहीं होता तो आस्ट्रेलिया के विशिष्ट प्राणि जीवन एवं वनस्पति जीवन का वास्तव में आज तक बचा रह पाना मुश्किल था। हालांकि जलपोत एवं वायुयानों की मदद से आज बहुत दूर स्थित प्राणि प्रजातियों को नजदीक पहुंचा दिया गया है जो जैव विविधता के लिए अत्यंत घातक हो सकता है। यदि हम विभिन्न पारिस्थितिकी क्षेत्रों की प्रजातियों को एक जगह रहने की गतिविधि को चालू रखें तो यह संभव है कि आक्रामक, 'महाप्रजातियां' जल्द ही दुनिया पर राज करने लगें, और बाकी सब पाठ्यपुस्तकों में चित्रों के रूप में ही बच पाएगा।

मानवीय जैवसंहति के रूप में रूपान्तरण

वैज्ञानिकों ने इंगित किया है कि जैव विविधता सिर्फ एक ही प्रजाति के अस्तित्व के लिए गायब होती जा रही है और वह प्रजाति है इन्सान। इसके पीछे दिया जाने वाला तर्क

यह है कि हालांकि विलुप्त हो रही प्रजातियां इन्सानी भोजन के रूप में प्रयोग की जाने वाली प्रजातियां नहीं हैं परन्तु उनका बायोमास यानी जैवसंहति मानव भोजन में परिवर्तित होता जा रहा है जब उनके प्राकृतिक आवासों को खेती की जमीन के रूप में प्रयोग कर लिया जाता है। एक अनुमान के अनुसार पृथ्वी के बायोमास का चालीस फीसदी से ज्यादा हिस्सा मात्र कुछ ही प्रजातियों से जुड़ा है जिसमें मानवीय, पालतू पशु और फसलें सम्मिलित हैं।

वैज्ञानिक चेतावनी देते हैं कि चूंकि प्रजातीय प्रचुरता के घटने से पारिस्थितिकी तंत्रों की टिकाऊ क्षमता घटती है, इसलिए विश्व के पारिस्थितिकी तंत्र विनाश की ओर बढ़ रहे हैं।

10

जैव विविधता प्रबंधन

इस बात से शायद ही कोई इन्कार करेगा कि जैव विविधता का सरंक्षण आज के समय की मांग है। पर इस बात पर कोई एकमत नहीं है कि इसे कैसे किया जाए।

मूल रूप से संरक्षण क्रियाएं दो प्रकार की हो सकती हैं - 'इन-सीटू' एवं 'एक्स-सीटू' संरक्षण। इन-सीटू से तात्पर्य है, "इसके वास्तविक स्थान पर या इसके उत्पत्ति के स्थान तक सीमित।" इन-सीटू संरक्षण का एक उदाहरण आरक्षित या सुरक्षित क्षेत्रों का गठन करना है। एक्स-सीटू संरक्षण की कोशिश का उदाहरण एक जर्मप्लाज्म बैंक या बीज बैंक की स्थापना करना है।

संरक्षण योजना की दृष्टि से इन-सीटू संरक्षण प्रयासों को बेहतर माना जाता है। परन्तु कई बार इस प्रकार का संरक्षण कार्य किया जाना संभव नहीं होता है। उदाहरण के लिए यदि किसी प्रजाति का प्राकृतिक आवास पूरी तरह नष्ट हो गया हो तो एक्स-सीटू संरक्षण प्रयास, जैसे एक प्रजनन चिड़ियाघर का गठन, अधिक आसान होगा। वास्तव में एक्स-सीटू संरक्षण इन-सीटू संरक्षण को सहायता प्रदान करने में महत्वपूर्ण है।

तो, क्या सब कुछ समाप्त हो चुका है? या हमारे पास अभी भी जैव विविधता को बनाए रखने के लिए एक मौका बाकी है। इस विषय की शुरूआत करने के लिए इस दिशा में इन्सानी कोशिशों को देखना बेहतर होगा।

जैव संरक्षण में परम्पराओं की भूमिका

कई परम्परावादी समाजों व संस्कृतियों में, प्रकृति एवं प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए अपनी योजनाएं मौजूद हैं। भारत के कई हिस्सों में, ग्रामीण लोग आज भी इनमें से कई संरक्षण योजनाओं को अपनाते हैं।

इनमें मादा पशुओं के शिकार पर पाबंदी, साल के समय विशेष में कुछ विशिष्ट प्रजातियों के शिकार या भोजन के रूप में प्रयोग से बचना (आमतौर से

पौधों और वृक्षों को पूजना भारतीय संस्कृति का हिस्सा है

प्रजाति के प्रजनन काल में), धार्मिक क्रियाओं के लिए कुछ प्रजातियों का संरक्षण, वनों के कुछ भाग या जलाशयों का इलाके के मान्य देवी-देवताओं के नाम पर संरक्षण सम्मिलित हैं।

वैज्ञानिकों ने आम आदमी द्वारा संरक्षण विधियों की हमेशा सराहना की है। उन्होंने पारिस्थितिकी तंत्रों में खतरों से जूझ रही प्रजातियों को बचाने के इन रिवाजों की महत्ता को माना है। जनता की ओर से शुरू किए गए संरक्षण प्रयासों में अत्यधिक क्षमता आंकी गई है। जिन क्षेत्रों में इस प्रकार के रिवाज अपनाए जाते हैं वहां हिरन,

कृष्ण मृग, मोर और चिंकारा या छोटा गरुड़ जैसे प्राणि बगैर किसी डर के घूमते नजर आते हैं और ग्रामीण अपनी दैनिकचर्या में व्यस्त रहते हैं। दुर्भाग्य से नई विकसित शहरी मान्यताएं और मानसिकताएं एवं तथाकथित वैश्विक संस्कृति ने इस प्रकार के रिवाजों को बहुत नुकसान पहुंचाया है।

पवित्र प्रजातियां

वनस्पति एवं प्राणी प्रजातियों की एक बड़ी संख्या परम्परागत रूप से सुरक्षित है और भारत के विभिन्न क्षेत्रों में संरक्षित की जा रही है। बहुत से जीव-जंतु देवी-देवताओं के साथ सम्बद्ध हैं और उन्हीं के साथ पूजे जाते हैं। शेर, हंस, मोर और यहां तक कि उल्लू और चूहे भी तुरन्त दिमाग में आ जाते हैं जो कि देवी दुर्गा और उनके परिवार से संबंधित माने जाते हैं जिनकी दुर्गा पूजा के दौरान पूजा होती है।

परम्परावादी लोग कभी भी तुलसी (ऑसिमम सैंक्टम) या पीपल (फाइकस बंगालेन्सिस) के पौधे को नहीं उखाड़ते, चाहे वह कहीं भी उगा हुआ हो।

प्रायः परम्परागत धार्मिक क्रियाओं या व्रत के दौरान कोई न कोई वनस्पति प्रजाति महत्वपूर्ण मानी जाती है। अधिकांश व्रत विशिष्ट वनस्पति प्रजाति से जुड़े हुए हैं। रोचक तथ्य यह है कि इनमें से कई प्रजातियां औषधीय गुणों से भी परिपूर्ण हैं।

बंगाल में दीपावली से एक दिन पहले 14 विभिन्न हरी पत्तेदार सब्जियां या शाक खाना एक परम्परा है। हालांकि आज ये चौदह सब्जियां एक साथ मिलाकर पैकेट में बिकती हैं परन्तु इस सत्य को नकारा नहीं जा सकता कि चौदह खाने योग्य प्रकारों की पहचान करना, सीखना या उन्हें उगाना एक व्यक्ति की जैव विविधता के बारे में प्रायोगिक ज्ञान को एक लाभदायक रूप में बढ़ाने में सहयक होगा।

गणचिह्न प्रजातियां

इस प्रकार की क्रियाओं की महत्ता तब स्पष्ट समझ में आती है जब हम देशी लोगों की जीवन पद्धति का अध्ययन करते हैं। बहुत से देशी लोग कुछ प्रजातियों के साथ अपनी वंश परंपरा मानते हैं। इन प्रजातियों को गणचिह्न प्रजातियां कहा

जाता है। सगोत्रीय व्यक्ति अपनी गणचिह्न प्रजाति का शिकार नहीं करते, हालांकि अन्य वर्ग इनका प्रयोग साधन के रूप में करने के लिए स्वतंत्र है। एक तरह से यह साधनों का टिकाऊ बंटवारा करने का ढंग है और साधनों के लिए लड़ाई होने की संभावना घट जाती है।

सबसे आम पवित्र पशु बाघ, गाय या सांड, मोर, नाग, हाथी, बंदर, भैंस, सियार, कुत्ता, हिरन और कृष्ण मृग हैं। गणचिह्न वनस्पतियों में चावल, अनाज और चंदन की लकड़ी सम्मिलित हैं। कुछ और भी सांस्कृतिक गतिविधियां हैं जिससे सुरक्षा का दायरा बढ़ सकता है। उदाहरण के लिए यदि एक व्यक्ति की मृत्यु असामान्य परिस्थितियों में होती है तो गोत्र के बड़े-बूढ़े इस असामान्य मृत्यु के लिए जिम्मेदार वस्तु, वृक्ष, पौधे या पशु को वर्जित घोषित कर देते हैं। हालांकि यह निषेध गोत्र तक ही सीमित रहता है। गोत्र के सदस्य को वंश परम्परागत निषिद्धता और गोत्रीय निषिद्धता दोनों की देखभाल करनी होती है।

पवित्र क्षेत्र

कई बार एक पूरा क्षेत्र, चाहे यह जंगल का क्षेत्र हो, पहाड़ों की चोटियां हों, नदियां, जलाशय, घास के मैदान हों या फिर बहुधा, एक अकेला वृक्ष ही किसी विशिष्ट देवी-देवता के साथ जोड़कर पवित्र बना दिया जाता है। इसकी यह प्रतिष्ठा इसे मानवीय स्वार्थसिद्धि से परम्परागत सुरक्षा प्रदान करती है। ये जैव विविधता के लिए स्वर्ग बन गए हैं।

ये पुनीत उपवन देश के विभिन्न भागों में भिन्न नामों से जाने जाते हैं। उदहरण के तौर पर केरल में इन्हें 'कणु' कहा जाता है। 'देवारबन/देवारकाडु/नागवन' कर्नाटक में इनका चर्चित नाम है, तमिलनाडु में 'कोविलकाडु' तो महाराष्ट्र में ये 'देवरहाटी' के नाम से जाने जाते हैं।

हिमाचल प्रदेश और उत्तरांचल में नदियों के कुछ हिस्से जिन्हें 'मच्छियाल' कहा जाता है, संरक्षित है। इन सुरक्षित क्षेत्रों के ऊपरी या निचले बहाव पर मछली पकड़ने पर पाबंदी होती है। हरिद्वार से ऋषिकेश के मध्य गंगा का विस्तार इसका

एक उदाहरण है। भारत भर में धार्मिक क्षेत्रों से जुड़े हुए तालाब, जलप्राणियों के दृष्टिकोण से संरक्षित हैं।

पवित्र उपवन

भारत में पुनीत उपवनों की उपस्थिति 18वीं सदी के आरंभ से रिकार्ड की गई है। उदाहरण के लिए बिश्नोई जनजाति राजस्थान के शुष्क क्षेत्रों में आज भी 'ओरण' नामक पुनीत उपवनों को बरकरार रखे हुए हैं। बिश्नोइयों के कानून पशुवध और पेड़ काटने को प्रतिबंधित करते हैं, विशेषकर उनके पवित्र खेजड़ी वृक्ष को। खेजड़ी के वृक्ष बालू के टीलों को दृढ़ता प्रदान करते हैं। 'ओरण' भारतीय चिंकारा या कृष्ण मृग को भी सुरक्षित प्राकृतिक आवास प्रदान करते हैं।

हालांकि विभिन्न स्थानों पर इन उपवनों के लिए बनाए गए नियमों में अन्तर पाए जाते हैं परन्तु इनकी कुछ बातें समान हैं। इनमें पेड़ काटने, जंगल की धरती से कुछ भी बटोरने और पशुओं के शिकार पर पाबंदी सम्मिलित है।

आज इस प्रकार के पुनीत उपवनों के अवशेष ही स्थानिक और संकटापन्न पौधों और पशुओं की प्रजातियों की अंतिम शरण स्थली हैं। ये प्रजातियों के औषधीय एवं प्राकृतिक खजानों के भंडार हैं जो उगाई जा रही किस्मों में सुधार कर सकते हैं।

सांस्कृतिक मानदण्डों का स्थायित्व

शहरी क्षेत्रों में भी, ज्यादातर परम्परागत रिवाज, दोपहर में सुबह की ओस की तरह गायब हो गए हैं। अभी भी कई तरह के नियंत्रण यादों में रचे-बसे हैं। बंगाल में देवी शोश्ती को मातृत्व की देवी माना जाता है और उसका वाहन बिल्ली को माना गया है। यह विश्वास किया जाता है कि बिल्ली के मारने वाले को देवी के कोप का भागी बनना पड़ता है और शायद ही कोई मां जानते-बूझते इस खतरे को उठाने को तैयार होती है। बिल्ली को जानबूझकर या अनजाने में मारने के प्रायश्चित के रूप में मारी गई बिल्ली के वजन के बराबर सोने की बिल्ली बनवानी पड़ती है। पुराने समय में बिल्लियां कृन्तकों (चूहे आदि) के नियंत्रण में काफी उपयोगी थी जो भंडारित अनाज को चट कर जाते थे। यह एक अलग मुद्दा है कि बिल्लियां आज स्वयं

पेस्ट या पीड़क बन गई जो गली-गली विचरती रहती हैं और शहरी रसोइयों से भोजन चुराती हैं।

यह वास्तव में आश्चर्यजनक है कि किस तरह हमारे पूर्वजों ने अपने विश्वासों को अपने खुद के अस्तित्व के लिए संजो कर रखा था। समय के साथ हल्के पड़ते और बदलते सांस्कृतिक मानदण्डों के बावजूद उन विश्वासों के अवशेष आज भी पशुओं एवं वनस्पतियों को सुरक्षा प्रदान करते हैं। जब आज के टिकाऊपन की गूंज के संदर्भ में इनका आकलन किया जाता है तो ये विश्वास इस संदर्भ को सदियों पहले से लेकर चलते हुए नजर आते हैं।

हम भारतीय ही अकेले नहीं थे। पूरी दुनिया में जमीन से जुड़े देशी लोगों ने प्रकृति का सम्मान किया और उसे अपनी आवश्यकता के लिए उपयोग किया न कि लालच के लिए। उदाहरण के लिए जाम्बिया के कुछ आदिवासी जनजातियों में मान्यता है कि एक शहद भरा छत्ता मिलना अच्छे भाग्य का सूचक है। दो छत्ते मिलना सौभाग्य है परन्तु तीन छत्ते मिलना जादू-टोना माना जाता है। इससे आत्म-नियंत्रण पैदा होता है। यह प्राकृतिक संसाधनों के अधिक दोहन पर लगाम कसने का तरीका है। इससे कोई भी प्रजाति नष्ट नहीं होगी और इस प्रकार जैव विविधता को संरक्षण भी मिलता रहेगा है।

वर्तमान चुनौतियों के साथ संरक्षण के प्रयास

आज सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि वैश्विक शहरी संस्कृति के बढ़ते दायरे और हमेशा फैलती हुई बाजारी अर्थव्यवस्था के कारण परम्परागत ज्ञान एवं रिवाज समाप्त होते जा रहे हैं। इन दबावों ने कई समुदायों को अपनी पहचान खोने, जिनसे संरक्षण क्रियाएं जीवित थीं, और अपने पवित्र उपवनों में अल्पकालिक लाभ के लालच में संसाधनों को नष्ट करने के लिए विवश कर दिया है। एक नई पीढ़ी में परम्पराओं और विश्वासों के लिए सम्मान नहीं है और अधिकतर युवा इन परम्परागत रिवाजों को अंधविश्वास के रूप में ही देखते हैं।

सौभाग्यवश, भारत में बहुत से संरक्षणकर्ता, समुदाय, सरकार और गैर-सरकारी संस्थाएं यह जान चुके हैं कि विकास; प्रगति एवं आधुनिकता एवं परम्परागत रिवाजों

के साथ-साथ चल सकता हैं। यह विचार तेजी से फैलता जा रहा है कि आधुनिक तंत्र में परम्परागत ज्ञान का होना बहुत आवश्यक है, अनुभवों से साबित हुआ है कि यह संभव है।

भारत के पवित्र उपवनों की सुरक्षा का विचार गति पकड़ता जा रहा है। विद्यालयों एवं समुदायों में पुनीत उपवन जागृति अभियान चलाए जा रहे हैं जिससे लोगों को जैव विविधता के संरक्षण के महत्व के बारे में शिक्षित किया जा सके और परम्पराओं के पुनः प्रचलन को बढ़ावा दिया जा सके।

एन.सी.एल. जैव विविधता सूचना केन्द्र एक वेब-अन्तरापृष्ठीय मल्टीमीडिया डाटाबेस तैयार कर रहा है जिससे पवित्र उपवनों की जैविविधता के स्तर को संग्रहित किया जा सके। इसमें संस्कृति एवं परम्पराएं, संरक्षण इतिहास और इनके साथ जुड़ी वर्जनाओं एवं कथाओं को भी सम्मिलित किया जाएगा।

जीवमण्डल आरक्षित क्षेत्र

जीवमण्डल आरक्षित क्षेत्र का कार्यक्रम 1971 में यूनेस्को के 'आदमी और जीवमण्डल' कार्यक्रम के अन्तर्गत आरंभ किया गया था। इस आरक्षित क्षेत्र के निर्माण का उद्देश्य जीवन के सभी प्रकारों का उनकी प्राकृतिक स्थिति में संरक्षण करना और साथ ही इनका अवलंब प्रदान करने वाले तंत्र का भी इसकी संपूर्णता के साथ संरक्षण करना है जिससे यह प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्रों में बदलावों पर नजर रखने और उनके मूल्यांकन करने के लिए एक संदर्भ तंत्र की तरह कार्य कर सके। विश्व का प्रथम जीवमण्डल रिजर्व 1979 में स्थापित किया गया था और उसके बाद यह दुनिया भर के 95 देशों में 425 स्थानों तक फैल चुका है। वर्तमान में भारत में 14 जीवमण्डल रिजर्व स्थापित हैं।

भारत और जैव विविधता

भारत में जंगल, वन्यजीव आदि से संबंधित अनेक कानून हैं। उदाहरण के लिए हमारे पास भारतीय वन्य अधिनियम, 1927 है, वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 है और वन (संरक्षण) अधिनियम, 1980 भी है।

भारत में जीवमण्डल रिजर्व की सूची

क्र.सं.	नाम	स्थापना दिनांक	क्षेत्रफल (वर्ग कि.मी. में)	स्थिति
1.	अचानकामर - अमरकंटक	2005	3835.51 (अभ्यन्तर 551.55 एवं मध्यवर्ती 3283.86)	म.प्र. के अनूपुर और डिंडोरी जिलों और छत्तीसगढ़ के बिलासपुर जिले के कुछ भागों को मिलाकर बना है।
2.	अगस्त्यमलाई	12.11.2001	1701	केरल की नेय्यार, पेप्पारा और शेन्डर्नी वन्यजीव अभ्यारण्य और उनके आसपास का क्षेत्र।
3.	देहांग-दिबांग	02.09.1998	5111.50 (अभ्यन्तर 4094.80 एवं मध्यवर्ती 1016.70)	अरूणाचल प्रदेश की सियांग और दिबांग घाटियों का भाग।
4.	डिब्रू-साइखोवा	28.07.1997	765 (अभ्यन्तर 340 एवं मध्यवर्ती 425)	डिब्रूगढ़ और तिनसुकिया जिलों (असम) के कुछ हिस्से।
5.	ग्रेट निकोबार	06.01.1989	885 (अभ्यन्तर 705 एवं मध्यवर्ती 180)	अण्डमान एवं निकोबार के सबसे दक्षिणी द्वीप।
6.	मन्नार की खाड़ी	18.02.1989	10500-खाड़ी का कुल क्षेत्र (द्वीपों का क्षेत्रफल 5.55)	भारत और श्रीलंका के मध्य मन्नार की खाड़ी का भारतीय हिस्सा (तमिलनाडु)।
7.	कंचनजंघा	07.02.2000	2619.92 (अभ्यन्तर 1819.34 एवं मध्यवर्ती 835.92)	कंचनजंघा पहाड़ों और सिक्किम के भाग।
8.	मनास	14.03.1989	2837 (अभ्यन्तर 391 एवं मध्यवर्ती 2446)	कोकराझार, बोंगईगांव, बारपेटा, नलबरी, काम्परूप और दरांग जिलों (असम) के भाग।

क्र.सं.	नाम	स्थापना दिनांक	क्षेत्रफल (वर्ग कि.मी. में)	स्थिति
9.	नन्दा देवी	18.01.1988	5860.69 (अभ्यन्तर 712.12 एवं मध्यवर्ती 5148.570 तथा परिवर्ती 546.34)	उत्तरांचल के चमोली, पिथौरागढ़ एवं बागेश्वर जिलों के हिस्से।
10.	नीलगिरी	01.09.1986	5520 (अभ्यन्तर 1240 एवं मध्यवर्ती 4280)	वायानाड, नागरहोल, बान्दीपुर एवं मधुमलाई, नीलाम्बर, साइलेन्ट घाटी तथा सिरूवनी पहाड़ (तमिल नाडु, केरल एवं कर्नाटक)।
11.	नोकरेक	01.09.1988	82 (अभ्यन्तर 47.48 एवं मध्यवर्ती 34.52)	मेघालय के गारो पहाड़ों के भाग।
12.	पचमढ़ी	03.03.1999	4926	मध्य प्रदेश के बैतूल, होशंगाबाद एवं छिन्दवाड़ा जिलों के भाग।
13.	सिमलीपाल	21.06.1994	4374 (अभ्यन्तर 845 एवं मध्यवर्ती 2129 और परिवर्ती 1400)	उड़ीसा के मयूरगंज जिले का हिस्सा।
14.	सुन्दरवन	29.3.1989	9630 (अभ्यन्तर 1700 एवं मध्यवर्ती 7900)	गंगा और ब्रह्मपुत्र नदी तंत्रों के डेल्टा का भाग। (पश्चिम बंगाल)।

(संदर्भ : http://wii.gov.in/nwdc/biosphere.htm)

भारत जैविक विविधता सम्मेलन (1992) में भागीदारी करने वाला देश भी है।

केन्द्र सरकार द्वारा जैविक विविधता अधिनियम, 2002 प्रस्तुत किया गया है। इसकी निम्न प्रमुख विशेषताएं हैं :

(i) देश के जैविक संसाधनों की अभिवृद्धि का नियमन जिससे जैविक संसाधनों के प्रयोग से प्राप्त लाभों का समान बंटवारा हो सके; एवं जैविक संसाधनों से संबंधित ज्ञान में वृद्धि हो सके।
(ii) जैव विविधता को संरक्षित और टिकाऊ विधि से प्रयोग करना।
(iii) जैव विविधता से संबंधित क्षेत्रीय समुदायों के ज्ञान का सम्मान एवं सुरक्षा करना।
(iv) क्षेत्रीय लोगों के साथ लाभों के समान बंटवारे की सुरक्षा करना, जो स्वयं जैविक संसाधनों के संरक्षक हैं और जैविक संसाधनों के उपयोग से संबंधित ज्ञान एवं सूचनाओं को जानने वाले हैं।
(v) जैविक विविधताओं के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण क्षेत्रों को जैविक विविधता विरासत क्षेत्र घोषित कर इनका संरक्षण एवं विकास करना।
(vi) संकटग्रस्त प्रजातियों की सुरक्षा और पुनर्वास की व्यवस्था।
(vii) जैविक विविधता के कार्यान्वयन की वृहद योजना में राज्य सरकारों के संस्थानों को सम्मिलित करना।

वास्तविक अभिलेख

डिजिटल युग के आगमन के साथ ही धरती पर पाई जाने वाली प्रजातियों के विशुद्ध अभिलेखों को रखने के लिए लम्बे-चौड़े डाटाबेस तैयार किए जा रहे हैं। इस प्रकार के कई डाटाबेस में से कुछ जाने-माने निम्न हैं :

'विश्व जैव विविधता डाटाबेस' (डब्ल्यू.बी.डी.) एक लगातार बढ़ता हुआ वर्गीकरण संबंधी डाटाबेस एवं सूचना तंत्र है जो आपको जीवों के अनेकों प्रकार दर्शाने वाले प्रजातीय बैंकों को ऑनलाईन सर्च एवं ब्राउज़ करने की सुविधा प्रदान करता है। डब्ल्यू.बी.डी. के माध्यम से सुगम्य 20 प्रजातीय बैंक वर्गीकरण सम्बन्धी

सूचनाएं, प्रजाति का नाम, उपनाम, विवरण, चित्रण और संदर्भों की सूची उपलब्ध कराने के साथ ही ऑनलाइन पहचानने के ढंग और इन्टरएक्टिव भौगोलिक सूचना तंत्र भी उपलब्ध कराते हैं।

'समस्त प्रजाति तालिका' का लक्ष्य हमारी वर्तमान पीढ़ी के दायरे में मौजूद पृथ्वी की प्रत्येक जीवित प्रजाति को अभिलेखित करना और इनके जीनीय नमूने प्राप्त करना है। समस्त प्रजाति तालिका का सिद्धांत है, "यदि हम किसी अन्य ग्रह पर जीवन की खोज करते तो सबसे पहले हम उस ग्रह के जीवन की एक व्यवस्थित तालिका या सारणी तैयार करते। यह वह चीज है जिसे हमने अपने स्वयं के ग्रह पर ही कभी नहीं किया।"

'आर्काइव' का मूल लक्ष्य है, 'पृथ्वी पर जीवन का चित्रण' यानी 16,119 से अधिक प्राणियों, पौधों एवं शैवालों, जो विलुप्त होने के खतरे में हैं, के जितने संभव हो उतने श्रव्य-दृश्य अभिलेख तैयार करना।" इस संकल्पना को क्रिस्टोफर पारसन्स ओ. बी.ई., बी.बी.सी. प्राकृतिक इतिहास इकाई के पूर्व अध्यक्ष ने सबसे पहले रखा।

यह एक गंभीर विचार है कि यदि हम अपनी बची-खुची जैव विविधता को बचाने के लिए अभी जागृत नहीं हुए तो शायद जब हम अपने गैर-इन्सानी भाइयों के पीछे-पीछे शाश्वत विस्मृति का हिस्सा बनें उस समय बस ये वास्तविक तालिकाएं ही बची रह पाएं।

अन्य अध्ययनः

1. फन्डामैन्टल्स ऑफ इकोलॉजी - यूजीन ओडम एवं गैरी डब्ल्यू.बारेट, ब्रूक्स कोल., 2004
2. फन्डामैन्टल्स ऑफ इकोलॉजी - यूजीन ओडम, डब्ल्यू.बी.सौन्डर्स कंपनी, 1971
3. कन्सेप्ट्स ऑफ इकोलॉजी - एडवार्ड्स जे.कॉरमॉन्डी, प्रेन्टिस-हाल ऑफ इंडिया प्रा.लि., 1971
4. एनीमल इकोलॉजी - चार्ल्स एल्टन, द यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रैस, 2001
5. द इकोलॉजी ऑफ एनीमल्स - चार्ल्स एल्टन, चैपमैन एण्ड हॉल साइन्स पेपरबैक्स, 1966
6. लाइफ ऑन अर्थ - डेविड एटनबरो, लिटिल-ब्राउन एण्ड कंपनी, 1981
7. इण्डियन बायोडायवर्सिटी; टास्क्स एहैड - टी.एन.खुशू, करन्ट साइन्स, 1994

पारिभाषिक शब्दावली

आरोही निक्षेप (स्टैलेक्टाइट्स): खनिज समृद्ध जल के टपकने से कंदरा या गुफा की छत से लटकने वाला हिमलंब आकार का खनिज अवसाद।

निलंबी निक्षेप (स्टैलेग्माइट्स): खनिज समृद्ध जल के टपकने से कंदरा या गुफा की छत पर जमा शंकुकार खनिज अवसाद।

केंद्रक (न्यूक्लिअस): डबल झिल्ली की खोल में स्थित गोलाकार द्रव्यमान वाला प्रोटोप्लाज्मा। यह अधिकतर जीवित यूकैरियोटिक कोशिका में पाया जाता है, इसे कोशिका का मुख्यालय भी माना जाता है।

पराबैंगनी: प्रकाश स्पेक्ट्रम में बैंगनी रंग के प्रकाश से आगे स्थित प्रकाश विविरण। इन प्रकाश तरंगों की तरंगदैर्ध्य 4000 ऐंग्स्ट्रम से कम होती है।

लिपिड्स: तैलीय प्रवृत्ति वाले वे कार्बनिक यौगिक जो जल में अघुलनशील और कार्बनिक यौगिक में घुलनशील होते हैं। यह कार्बोहाइड्रेट और प्रोटीन के साथ जीवित कोशिका के मुख्य संरचनात्मक घटक होते हैं।

नेस्केन्ट: किसी रासायनिक तत्व की उस क्षण अवस्था जब वह किसी यौगिक से स्वतंत्र होता है।

जाइलम: जड़ों से पोषक तत्व और पानी को ऊपरी भाग तक ले जाने वाला वनस्पति ऊतक।

क्लोम (गिल): अधिकतर जलीय जीव इस अंग द्वारा जल में घुली ऑक्सीजन को अवशोषित करते हैं। इसमें अनेक छोटे-छोटे रक्त वेसल को रखने वाली झिल्लियों की शृंखला होती है। ऑक्सीजन रक्तधारा द्वारा गुजरती रहती है एवं झिल्लियों से गुजरने वाले पानी के साथ कार्बन डाइआक्साइड बाहर निकलती है।

स्पेक्ट्रमः विकिरण स्रोत से ऊर्जा का तरंगदैर्घ्य के क्रम में बिखराव।

कच्छ वनस्पति (मैंग्रोव): ज्वारीय क्षेत्र में उगने वाली लवण सह जड़ों और तनों वाली वनस्पतियां।

चतुष्पादः सभी कशेरुकी जीवों में चार पैर होते हैं। सांपों के पूर्वजों में भी चार पैर होते थे।

अनुकूली विकिरणः विभिन्न वातारण में फिट होने वाले जीव और वनस्पतियां इनमें से प्रत्येक विविधता लिए होते हैं।

हाइड्रोकार्बन ईंधनः केवल कार्बन और हाइड्रोजन रखने वाले बेंजीन और मिथेन जैसे वृहद मात्रा में उपलब्ध कार्बनिक यौगिक। हाइड्रोकार्बन ईंधनों में कोयला, पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस शामिल हैं।

सूक्ष्मजीवीः सूक्ष्मजीवी, विशेषकर, जीवाणु जिनके कारण बीमारी फैलती है।

एकल कृषिः एक ही फसल उगाना।

हिमयुगः वह अवधि जिसमें उत्तरी गोलार्ध वृहद् हिम पर्तों से ढक गया था। इसे ग्लैशियर युग भी कहते हैं।

अनुक्रमणिका

यूकैरयोट्स, 6
खाद्य पिरैमिड, 39
खाद्य जाल, 43
खाद्य शृंखला, 39, 40, 42, 44
इन-सीटू, 75
ईकोटूरिज़्म, 72
बहुकोशिकीय, 6, 7, 25, 36
बीटा विविधता, 58
क्यूटिकल, 25
कृष्ण मृग, 76, 79
एककोशिकीय, 6, 7, 8,19, 39
कार्बोनीफेरस काल, 16
कोशिकीय, 36
कोशिका, 4, 5, 6
कोशिका रोग विज्ञान, 5
कोशिकांग, 5
कोशिकाद्रव्य, 7
कोलाकैन्थ, 32
एक्स-सीटू, 75
कैरोलस लिनियस, 35
क्लोरोफिल, 18, 25
मृदा संदूषण, 69
मृतजीवी, 45
मीसोजोइक युग, 27
मोगरा, 31
बिश्नोई, 79
रियो डी जेनेरियो, 50
सिम्पसन सूचकांक, 57
चिड़ियाघर, 75
फिशपॉड, 33
निर्जीव, 1, 3, 4
टिकाऊ पारिस्थितिकी, 67
हॉटस्पॉट, 61
पर्यावरण, 48
परपोषी जीव, 16
पराबैंगनी किरणें, 19
परागणकर्ता, 64
परजीवी, 44
पारिस्थितिकी, 41, 48, 50, 59, 63, 64, 70, 74, 81
पारिस्थितिकी विविधता, 49
पारिस्थितिकी पिरैमिड, 43, 44
पुनः चक्रीकरण, 42
पैसेन्जर कबतूर, 70
पैनस्पर्मिया सिद्धांत, 15
प्रकाश संश्लेषण, 17, 18, 26, 42
प्रोकैरयोट्स, 4
प्रोटोप्लाज्म, 5
प्रजाति विविधता, 49
प्रजातीय प्रचुरता, 57
शैनन-वीनर सूचकांक, 58
संघ, 37
संकटाग्रस्त प्रजातियां, 84
सांस्कृतिक अभिज्ञान, 68
स्थानिक प्रजाति, 60
स्वपोषी, 16

सर्वाहारी, 42
सजीव, 1,4
स्टैनले मिलर, 14
सूक्ष्मदर्शी, 36
सूक्ष्मजीव, 59
उष्णकटिबंधीय वन, 53, 59
ड्रैगनफ्लाई, 28, 29
डीएनए, 11, 52
डीऑक्सीराइबोज, 11
डीऑक्सीराइबोन्यूक्लिक एसिड, 5
उत्परिवर्तन, 52
डेविड एटनबरो, 9, 12
दीपावली, 77
देवरहाटी, 78
देवदार, 27
वृहद जैवविविधता, 60, 61
वायु प्रदूषण, 69
वर्षावन, 60, 66
वॉलवॉक्स, 7
विश्व जैवविविधता डाटाबेस, 84
जैवविविधता, 65
ज़ाइलेम, 26
जीवमण्डल, 45
जीवमण्डल आरक्षित क्षेत्र, 81
जीवविज्ञान, 37
जीवविज्ञानी, 55
जीवाश्म, 16, 20, 27, 33
जीवद्रव्य, 6, 45
जीनोम मैपिंग, 52
ज्वालामुखी, 11, 18, 73
जैविक विविधता सम्मेलन, 84
जैव मण्डल, 3
जैव-भूरसायन चक्र, 45, 46
जैवविविधता, 47, 48, 49, 50, 51, 52, 53, 54, 56, 59, 60, 67, 69, 73
जैवविविधता हॉटस्पॉट, 61
जैवसंहति, 44, 74
जगत, 36
जलवायवीय परिवर्तन, 69
जलवायु, 53
नोटोकॉर्ड, 37
एन्टीबायोटिक्स, 65
अंधविश्वास, 80
ट्राइलोबाइट्स, 23
अतिउर्वरण, 46
अपघटक, 41
अरस्तू, 13
टायरेनोसॉरस रैक्स, 35
आवृतबीजी, 27
ओरण, 79
ओज़ोन, 19
आनुवंशिकता, 52
ऑर्डोविसियन काल, 24
टैक्सोनॉमी, 36
अजगर, 57
अनुकूलन, 71
अल्फा विविधता, 58
गण, 37
गणचिह्न प्रजातियां, 77, 78
गामा विविधता, 58
गुवाम, 71
गैलेपागोस, 72,73
लंगफिश, 32
लावा, 11
फ्लोएम, 26